श्रीविश्वनाथो जयति ।

आर्यगौरव ।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित ।

भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेडके द्वारा
श्रीभारतधर्ममहामण्डलके शास्त्र
प्रकाशक विभागके लिये
प्रकाशित ।



काशी ।
सम्वत् १९८१ विक्रमीय ।



प्रथमावृत्ति २००० } सन् १९२४ ई० { मूल्य ॥) आना ।



श्रीविश्वनाथ अन्नपूर्णा दानभण्डार ।

श्रीभारत धर्म महामण्डल प्रधान कार्यालय काशी में दीन दुःखियों के क्लेश निवारणार्थ यह सभा स्थापित की गई है। इस सभा के द्वारा अति विस्तृत रीति पर शास्त्र-प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया गया है। इस सभा द्वारा धर्म्म पुस्तिका पुस्तकादि यथा सम्भव विना मूल्य वितरण करने का भी विचार रक्खा गया है। इस दान भण्डार के द्वारा महामण्डल से प्रकाशित साधुओं का कर्तव्य, धर्म और धर्माङ्ग, दान धर्म नारी धर्म, महामण्डल की आवश्यकता आदि कई एक हिन्दी भाषा के धर्मग्रन्थ और अंग्रेजी भाषा के कई एक ट्रैक्ट्स् विना मूल्य योग्य पात्रों को बांटे जाते हैं। शास्त्र प्रकाशन की आमदनी इसी दान भण्डार से दीन दुःखियों के दुःख मोचनार्थ व्यय की जाती है। इस सभा में जो दान करना चाहें या किसी प्रकार का पत्राचार करना चाहें वे निम्न लिखित पते पर पत्र भेजें।

सेक्रेटरी, श्रीविश्वनाथअन्नपूर्णा दानभण्डार,
श्रीभारत धर्म्म महामण्डल, प्रधान कार्यालय
जगत् गञ्ज, बनारस (छावनी)

श्रीविश्वनाथो जयति ।

आर्यगौरव ।



श्रीस्वामी दयानन्द विरचित ।

भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेडके द्वारा श्रीभारतधर्म-
महामण्डलके शास्त्र प्रकाशक विभागके लिये
प्रकाशित ।



काशी ।

सम्बत् १९८१ विक्रमीय ।



प्रथमावृत्ति २०००] सन् १९२४ ई० [मूल्य ॥) आना ।

मुद्रक—गणपति कृष्ण गुर्जर, श्री लक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी १३९२-२४।

प्रकाशक—भारतधर्म सिण्डिकेट लिमिटेड श्रीभारतधर्म महामण्डल बनारस।

सूची ।

प्रस्तावना।

'महाजनो येन गतः स पन्थाः' श्रीभगवान् वेदव्यासके इस उपदेशके अनुसार महत् पुरुषोंकी चरित्रचर्चा जातीय जीवन तथा व्यक्तिगत जीवनके उन्नत बनानेमें अवश्य ही सहायक होती है, इसमें अणुमात्र सन्देह नहीं है। यही कारण है कि अन्य देशवासी तथा अन्य धर्मावलम्बी लोग अपनी सन्तानोंको सबसे प्रथम निजदेश तथा निजजातिके विषयमें गौरवज्ञान कराकर तब व्यवहारिक अन्यान्य विषयोंकी शिक्षा दिलाते हैं। उनके कोमल हृदयोंमें अपने प्राचीन महापुरुषोंकी गुणगाथा वज्रलेपकी तरह जब अङ्कित हो जाती है तो उत्तर जीवनमें विजातीय किसी भी मन्दभावका प्रभाव उसमें जम नहीं सकता। किन्तु आर्यजातिकी लौकिक शिक्षा विदेशियोंके हाथमें होनेके कारण और उस शिक्षाशैलीके भीतर शिक्षा तथा जातीय शिक्षाका सम्पूर्ण अभाव रहनेके कारण इस दुर्भाग्य जातिको अभी तक अपनी होंस सम्हालने का तथा अपनी ओर ताकनेका मौका नहीं मिला है। यह अर्थकरी-विद्यारूपी मृगजलके पीछे सारी आयु बिता देने पर भी यह जाति दुःखी और दरिद्र ही बनी रहती है और आत्मगौरवका पता न लगनेके कारण न अपना ही उद्धार कर सकती है और न दूसरेके उद्धारमें सहायक ही बन सकती है। इसी

कारण श्रीभारतधर्ममहामण्डलके पुरुषार्थसे स्कूल कालेज में धर्मशिक्षा तथा जातीय शिक्षाके लिये कुछ इस प्रकार उत्तम ग्रन्थ प्रकाशित हो गये हैं जिनके सदुपयोगद्वारा हिन्दु बालक बालकागण सभी अपनी जीवन-तरणीको जातीय दुर्भाग्य रूप भँवरसे अनायास ही बचा सकते हैं। चरित्रचन्द्रिका, नीतिचन्द्रिका, आचारचन्द्रिका आदि स्कूलपाठ्य सभी ग्रन्थ इसी श्रेणिके हैं। और 'आर्यगौरव' भी इसी महान् उद्देश्यकी पूर्त्तिके लिये प्रकाशित किया गया। यह ग्रन्थ आचार चन्द्रिका-के बाद प्रथम श्रेणिमें पढ़ने योग्य है। इससे पहिले 'नवीन दृष्टिमें प्रवीण भारत' नामक ग्रन्थ इसी श्रेणिका पाठ्य था। किन्तु उसमें विषयोंकी कुछ कठिनताके कारण वह ग्रन्थ अब बी० ए० क्लासका पाठ्य बना दिया गया है और सरल सुन्दर 'आर्यगौरव' उसके स्थानमें सन्निवेशित किया गया है। आशा है हमारे भारतके भावी आशास्थल छात्रगण इसके पाठसे विशेष लाभवान् होंगे।

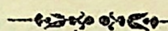
यथानियम इस पुस्तकका स्वत्वाधिकार दीन दुःखियोंकी सहायताके अर्थ स्थापित श्रीविश्वनाथ अन्नपूर्णा दान-भण्डार को समर्पित किया गया।

काशी धाम
गङ्गा दशहरा
सं० १९८१ वि०



निवेदक
श्रीकवीन्द्रनारायण सिंह
अध्यक्ष, श्रीभारतधर्ममहामण्डल।

आर्यगौरव ।



प्रकृति विचार ।

आर्यजातिकी मातृभूमि भारतकी प्रकृति और सब देशोंकी प्रकृतिसे कुछ विलक्षण ही है। जगत्के किसी देशमें तीन ऋतु और किसी देशमें चार ऋतु प्रकट हुआ करती हैं; परन्तु यह भारतवर्ष ही है कि जहाँ ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शीत और वसन्त रूपी छओं ऋतु पूर्ण-रूपसे प्रकाशित होती रहती हैं। जगत्के विशेष विशेष देशोंमें एक समय पर एक ही ऋतु प्रकट हुआ करती है, परन्तु यह भारतवर्ष ही है कि जहाँ अन्वेषण करने पर एक ही कालमें विशेष विशेष स्थानोंमें विशेष विशेष ऋतु प्रकट ही रहती हैं; ग्रीष्मकालमें यदिच मारवाड़ प्रदेशमें घोर ग्रीष्मका विकाश होता है, तथापि उसी समयमें दक्षिणा-वर्त्तमें वसन्त और हिमालयकी ओर नाना प्रदेशोंमें शीत, हेमन्त आदि ऋतुओंका प्रादुर्भाव भी बना रहता है; मानो यह भारतवर्ष ही है कि जहाँ छ ऋतु हस्तधारण करते हुए विचरण करते ही रहते हैं; ऋतुओंमें भ्रातृ-प्रेम होना भारतवर्षमें ही

सम्भव है। यह भारतवर्ष ही है कि जहाँ पृथिवीके सब पर्वतों-से अति उच्च पर्वत हिमालय विराजमान है; यह भारतवर्ष ही है कि जहाँ पृथिवीकी सकल नदियोंमें पवित्र, विशेष विभूति-युक्त गङ्गा नदी अपने तरल-तरङ्गोंको धारण करती हुई जीवोंको पवित्र कर रही है। यूरोपके तथा इस देशके अनेक वैज्ञानिक पण्डितोंने परीक्षाके द्वारा निर्णय कर लिया है कि पृथिवीकी और और नदियोंसे गङ्गा नदीमें बहुत कुछ विलक्षणता है। उनको यह पता लग गया है कि गंगाकी वायु, गंगाकी मिट्टी, गंगाका जल, सभीमें शरीरके पुष्ट तथा आरोग्य करनेकी अपूर्व शक्ति विद्यमान है। गंगाकी मिट्टीके मलनेसे सब प्रकारके चर्म-रोग आराम होते हैं। गंगाजलमें स्नान करनेसे शारीरिक व्याधि तथा शिरोरोग आराम होते हैं। गंगाके वायुसेवनसे भी शरीर स्वस्थ हो जाता है। गंगाका जल पीनेसे अजीर्ण रोग-की तो बात ही क्या, जीर्णज्वर आदि कठिन व्याधियाँ भी नष्ट हो जाती हैं। केवल इतना ही नहीं, आज कल यूरोपके बड़े बड़े साइन्सवालोंने यह प्रमाण कर दिखाया है कि गंगाजलमें शरीरके बल बढ़ानेकी अपूर्व शक्ति विद्यमान है, जिससे रोग-मुक्तिके बाद बलप्राप्त करनेके लिये डाक्टरी टानिकके बदले यदि रोगी गङ्गाजल सेवन करे तो शरीरमें अपूर्व बल प्राप्त हो सकता है। कूप तथा अन्य नदियोंका जल दो चार दिनोंमें ही सड़कर पान करने योग्य नहीं रहता, किंतु गङ्गाजलमें क्या अपूर्वता है कि, इसे चाहे कितनी ही दूर ले जाकर क्यों न रक्खें, गङ्गाजल

कभी नहीं सड़ेगा और वैसा ही स्वादिष्ट तथा पान करने योग्य बना रहेगा। जितने संक्रामक रोग और प्लेग आदि कठिन रोग देशका सर्वनाश करते हैं, इनके विष प्रायः दूषित स्थान या दूषित जलमें उत्पन्न होते हं। मैलेरिया, प्लेग, विसूचिका (हैजा) आदि अनेक रोग विषाक्त कीटाणुके द्वारा फैलते हैं। वे सब कीट प्रायः जलमें उत्पन्न होते हैं। किन्तु परीक्षा करके देखा गया है कि गङ्गाजलमें कभी किसी रोगके कीट नहीं उत्पन्न होते और इतना तक साइन्सवालोंने परीक्षा कर निश्चय कर लिया है कि गंगाजलमें रोगके कीटोंको लाकर छोड़ देने पर भी वे कीट थोड़े ही समयके भीतर मर जाते हैं। गंगाजलमें इस प्रकारकी अपूर्वशक्तिको देखकर ही प्राचीन आर्य महर्षियोंने कहा है:—

शरीरे जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे।
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः॥

जराग्रस्त रुग्ण शरीरके लिये गंगाजल ही औषध तथा नारायण ही वैद्य हैं। पृथ्वीके और देशोंमें प्रायः एक ही प्रकारकी भूमि देखनेमें आती है, परंतु प्रकृतिमाताकी लीलाभूमि इस भारतभूमिमें सब प्रकारकी ही भूमियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। पृथ्वीके और नाना देशमें एक वर्णके मनुष्य ही देखे जाते हैं, (यथा—यूरोपमें श्वेतवर्णके मनुष्य, आफ्रिकामें कृष्णवर्णके मनुष्य और चीनमें पीतवर्णके मनुष्य इत्यादि) परंतु यह भारत-प्रकृतिकी ही पूर्णता है कि, यहांके अधिवासियोंमें सब

वर्ण देख पड़ते हैं। उज्ज्वलगौर, गौर, उज्ज्वलश्याम, श्याम, कृष्ण और पीत, सब वर्णके भारतवासी ही दृष्टिगोचर होते हैं। यह भारत-प्रकृति हीकी श्रेष्ठता है कि यहाँ समस्त संसारके जीवजंतु जन्मा करते हैं; वृहत्हस्तीसे लेकर नाना प्रकारके विचित्र मूषिक तक इस भारत-प्रकृतिकी पूर्णताको प्रमाणित करते हैं। अन्वेषण द्वारा यही सिद्ध होगा कि जितने प्रकारके श्रेष्ठ और निकृष्ट जन्तु, जितने प्रकारके श्रेष्ठ और निकृष्ट कीट और जितने प्रकारके श्रेष्ठ और निकृष्ट पक्षी पृथिवी और उप-वनोंको सुशोभित करते हैं, और कर सकते हैं, उनमेंसे कदापि कोई विलक्षण जन्तु यहां उत्पन्न न होता हो अथवा उसकी उत्पत्ति यहांसे नष्ट हो गई हो, तथापि यह मानना ही पड़ेगा कि वे सब इस भूमिमें उत्पन्न होकर जीवित रह सकते हैं; परंतु यहांके बहुतेरे जीव यदि यूरोप आदि देशमें भेजे जायँ तो कदापि वहांकी प्रकृतिमें जीवित नहीं रह सकते। इस कार-णसे भारतीय प्रकृतिकी श्रेष्ठता सर्ववादिसम्मत है और यह तो जगद्विख्यात है कि जितने प्रकारके फल, जितने प्रकारके अन्न, जितने प्रकारके वृक्ष, लता, गुल्म, औषधि और बूटि आदि भारतवर्षमें उत्पन्न होती हैं उस प्रकारकी और किसी देशमें उत्पन्न हो ही नहीं सकतीं; इस कारण यह भारतभूमि ही पृथिवीकी और भूमियोंकी आदर्शभूमि है। इसी कारण भारतकी प्रकृति पूर्ण है। बाहरी प्रकृति भीतरी प्रकृतिकी धात्री है; इस कारण जब भारतकी प्रकृति ही पूर्ण है तब भार-

तवर्षमें ही पूर्ण मानवका जन्म होना सम्भव है। यदिच कोई यूरोपवासी संस्कृतमें विशेष ज्ञानलाभ कर ले, यदिच कोई चीन देशवासी अथवा कोई तुर्क देशवासी संस्कृत विद्यामें निपुण हो जावे, तथापि यह प्रत्यक्ष प्रमाणसिद्ध है कि वे कदापि संस्कृत भाषाका शुद्ध उच्चारण कर नहीं सकेंगे, परन्तु यह भारतवासियोंकी ही शक्ति है कि वे चाहे जिस भाषाकी योग्यता लाभ करें, उसी भाषाके उच्चारणमें निपुणता प्राप्त कर लिया करते हैं।

धन और सम्पत्तिके सिवाय कोई मानव-जाति सम्पूर्ण उन्नतिको प्राप्त नहीं कर सकती, परंतु इस विचारमें भी भारतवर्ष सर्वोत्कृष्ट ही है। इस भूमिकी अद्भुत उर्वराशक्ति, इस भूमिके अन्तर्गत स्वर्ण, रौप्य, मणि, माणिक्य और नाना प्रकारके खनिज पदार्थोंकी खानें, भारतसमुद्र गर्भकी मुक्ता और प्रवाल आदि मूल्यवान् पदार्थोंकी उत्पादिका शक्ति और भारतवर्षके वनोंके नाना अमोल पदार्थोंकी विचित्रता ही भारतकी ऐश्वर्य्यसम्बन्धसे पूर्णताको सिद्ध कर रही हैं। यह भारतवर्षकी ऐश्वर्य्य-पूर्णताका ही कारण है कि आज प्रायः दो सहस्र वर्षोंसे यह विजातीय नरपतिगण द्वारा नियमित रूपसे अधिकृत होने पर भी अभी तक इसके ऐश्वर्य्यकी पूर्ण हानि नहीं हुई है, यह भारतवर्षकी ऐश्वर्य्य-पूर्णताका ही कारण है कि आज दिन सर्व्वश्रेष्ठ सम्राटोंकी तीव्रलोभदृष्टि इसपर ही बनी है, यह भारतवर्षकी ऐश्वर्य्य-पूर्णताका ही कारण है कि भारतविजयी

नरपति पृथिवीमें सर्व्वश्रेष्ठ सम्राट् कहाता है । इन सब प्रत्यक्ष प्रमाणोंके अतिरिक्त लेख द्वारा भी भारत प्रकृतिकी श्रेष्ठताका प्रमाण अनेक।यूरोपीय विद्वान्गणलिखित भारत इतिहास आदिमें पाया जाता है; जितने निरपेक्ष पश्चिमी ऐतिहासिक हुए हैं उन सबोंने भारतवर्षको ही पृथिवी भरमें सर्वश्रेष्ठ प्रकृति-युक्त करके वर्णन किया है ।

प्रोफेसर मेक्समूलर साहबने कहा है—"समस्त पृथिवीमें यदि वैसा कोई देश मुझे बताना हो जिसको प्रकृति माताने धन, ऐश्वर्य, शक्ति और सौंदर्यके द्वारा पूर्ण कर रक्खा है, यहाँ तक कि जिसे पृथिवीमें स्वर्ग कहने पर भी अत्युक्ति नहीं होगी, तो मैं मुक्तकण्ठ होकर बता दूंगा कि वह देश भारतवर्ष है। यदि कोई मुझसे कहे कि किस देशके आकाशके नीचे मनुष्यके अन्तःकरणकी पूर्णता प्राप्त हुई थी तो मैं बता दूंगा कि वह देश भारतवर्ष है । यदि मैं अपने आत्मासे पूछूं कि हम यूरोप-वासी अपने जीवनको पूर्ण उदार, और मनुष्यत्वपूर्ण बनानेके लिये तथा पूर्ण उन्नति प्राप्त करनेके लिये किस देशके साहित्य और शास्त्रसें शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं, तो मुझे यही उत्तर मिलेगा कि वह देश भारतवर्ष है। भाषा, धर्म, प्राचीन इतिहास, दर्शन शास्त्र, आचार, शिल्प, ज्ञान, विज्ञान, कोई भी विषय मनुष्य जानना चाहे, सभीका अपूर्व भण्डार भारतवर्षमें ही प्राप्त हो सकता है ।" प्रोफेसर हीरेनने कहा है—"केवल एशिया ही नहीं, अधिकन्तु समस्त पश्चिम देशके ज्ञान और धर्मका

आधारस्थान यह भारतवर्ष है"। मि० मरे साहबने लिखा है—"भारतवर्षका प्राकृतिक दृश्य तथा इस भूमिमें उत्पन्न द्रव्योंकी तुलना पृथ्वीके और किसी देशके साथ नहीं हो सकती है"। इन कारणोंसे तथा इन सब प्रमाणोंसे यह सिद्ध है कि भारतवर्ष ही पूर्णप्रकृतियुक्त भूमि है और पूर्णप्रकृतियुक्त मानव भारतवर्षमें ही जन्म ग्रहण कर सकते हैं।

शरीरकी पूर्णता।

भारतकी प्रकृति पूर्ण है, इस कारण आध्यात्मिक उन्नतिकी पराकाष्ठा भारतवर्षमें ही सम्भव है; भारतवर्षकी प्रकृति पूर्ण है, इस कारण वह धर्मविस्तारकी आदि भूमि समझी जाती है; भारतवर्षकी प्रकृति पूर्ण है, इस कारण ही यहाँकी स्त्रियाँ शारीरिक और मानसिक पूर्णताको प्राप्त करके जगत्में अतुलनीय हो रही हैं; उनकी प्रकृतिके पूर्ण होनेके कारण ही वे सतीत्व, शीलता, लज्जा, पतिभक्तिकी पूर्णता अर्थात् पतिके अर्थ ही जीवन धारण करना, वात्सल्यस्नेहकी पूर्णता इत्यादि स्त्री प्रकृति उपयोगी सद्गुण युक्त हुआ करती हैं; भारतवर्षकी प्रकृति पूर्ण है, इस कारण ही यहाँके पुरुष स्वभावसे ही प्रायः दयालु, सुशील, शान्तिप्रिय और धर्मपरायण हुआ करते हैं; भारतवर्षकी प्रकृति पूर्ण है, इस कारण ही सनातन वैदिक धर्म्मकी शिक्षासे बहुदेशव्यापी बौद्धधर्म और बौद्धधर्म्मकी शिक्षा-

से ईसाई धर्म्म और पुनः उससे ही इस्लाम धर्म्मकी वृद्धि होते हुए समस्त संसारमें नाना धर्म्म विस्तृत हो गये हैं। प्रकृतिकी पूर्णताका प्रत्यक्ष प्रमाण शरीरकी पूर्णता है, शरीरकी पूर्णताका प्रत्यक्ष प्रमाण मानसिक पूर्णता है और मानसिक पूर्णताका प्रत्यक्ष प्रमाण धर्म्मकी पूर्णता है। धर्म्म राज्यमें तथा आध्यात्मिक जगत्में भारतवर्षने जितनी उन्नति की है, धर्म्म जगत्का भारतवर्षने जितना अन्वेषण किया है, उतना न तो और किसी देशने किया है और न भविष्यत्में करनेकी आशा है।

भारतवर्षके विषयमें कहा गया है कि:—

मन्ये विधात्रा जगदेककाननम् ,
विनिर्मितं वर्षमिदं सुशोभनम् ।
धर्माख्यपुष्पाणि किरन्ति यत्र वै,
कैवल्यरूपं च फलं प्रचीयते ॥

भारतवर्ष भगवान्का बनाया हुआ रमणीय उद्यान है, जिसमें धर्मरूपी फूल और मुक्तिरूपी फल उत्पन्न होता है। जिस प्रकार सायन्स और शिल्पकलाकी उन्नतिसे स्थूलभौतिक उन्नति समझी जाती है, उसी प्रकार ज्ञान और आत्मतत्त्व-विज्ञानकी उन्नतिसे आध्यात्मिक उन्नति समझी जाती है। प्राचीनकालमें भारतीय आर्यजाति आध्यात्मिक उन्नतिकी पराकाष्ठा तक पहुँच गई थी, इसको सभी निरपेक्ष लोग स्वीकार करते हैं। जिस गंभीर आत्मतत्त्वकी खोजमें प्लेटो और सक्रेटिस जैसे मनीषी थक गये हैं और स्पेन्सरने ईश्वर तत्त्व जानना

मेरी बुद्धिसे अतीत है ऐसा कह दिया है, वहाँ पर अपनी सूक्ष्म बुद्धि और अतीन्द्रिय दृष्टिको दौड़ाकर आत्मतत्त्वका पूर्ण पता लगना प्राचीन आर्य्योंकी ही महती शक्तिका फल है जिसके कारण केवल भारतवर्ष ही नहीं, समस्त संसार उनका ऋणी रहेगा। पाश्चात्य दार्शनिक-विज्ञान और आर्य्यजातिके दार्शनिक-विज्ञानकी परस्पर तुलना करनेसे संक्षेपतः यही कहना यथार्थ होगा कि जहाँ पर अन्य देशोंका विज्ञान समाप्त हुआ है वहाँसे आर्यजातीय दार्शनिक विज्ञान प्रारम्भ होकर अनन्त ज्ञान समुद्रमें जाकर विलीन हुआ है। ऐसी आध्यात्मिक उन्नति जिस देशके पुरुषोंमें हो सकती है वह देश पूर्ण शक्तिसे भरा हुआ है इसमें सन्देह ही क्या है।

जिस प्रकार ज्ञानकी पूर्णतासे पुरुषकी पूर्णता और मुक्ति होती है, उसी प्रकार पातिव्रत्यकी पूर्णतासे स्त्रीकी पूर्णता और मुक्ति होती है, इसलिये जिस देशकी स्त्रियोंमें सती धर्मकी पूर्णता देखनेमें आती है वही देश पूर्णोन्नत है इसमें अक्षरमात्र सन्देह नहीं है। समस्त पृथ्वीमें केवल आर्यमाता भारतभूमि ही सतीत्वकी पूर्णता द्वारा विभूषित हुई थी, इस बातको सभी लोग एकवाक्य होकर स्वीकार करेंगे। आर्य्यरमणीका जीवन अपने सुखके लिये नहीं, किन्तु पति देवताकी पूजाके लिये ही है, इस लिये पति देवताका देहान्त हो जानेपर आर्य्यरमणी एकाकिनी संसारमें नहीं रह सकती; क्योंकि देवताका विसर्जन होने पर नैवेद्यकी आवश्यकता क्या है? इसलिये आर्य्यशास्त्रमें

सतीके लिये मृतपतिके साथ सहमृता होनेतककी आज्ञा दी गई है। प्राचीन कालमें इस प्रकारकी आज्ञाका पूर्णतया प्रतिपालन हुआ करता था। राजा पाण्डुकी मृत्युसे माद्रीका सहमरण इत्यादि आर्यरमणियोंकी पूर्णताके ज्वलन्त दृष्टान्त यहाँ पर ही मिलेंगे। अतः प्राचीन आर्यजातिकी शारीरिक पूर्णता और भारतवर्षकी प्रकृतिकी सर्वविध पूर्णता सर्ववादिसम्मत है।

—:o:—

आर्यजातिका नैतिक जीवन।

प्राचीन आर्य-जातिमें मानसिक उन्नति कितनी हुई थी, आर्य-जातिके नैतिक जीवन पर विचार करनेसे उसका स्वरूप पूर्णतया प्रकट होगा। जहाँ पर हरिश्चन्द्र जैसे महात्मा सत्यरक्षाके लिये राज्य, धन, स्त्री, पुत्र तकको उत्सर्ग करके चाण्डालका दासत्व कर सकते हैं, जहाँपर शरणागत पक्षीतककी रक्षाके लिये शिवि राजा अपने शरीरको खण्ड खण्ड करके काट दे सक्ते हैं, जहाँपर आसुरी शक्तिका दमन करनेके लिये महर्षि दधीचि अपनी अस्थितकको प्रदान कर सकते हैं, जहाँपर मयूरध्वज जैसे गृहस्थ अतिथिसत्कारकी पराकाष्ठाका आदर्श स्थापन करनेके लिये स्त्री पुरुष मिलकर अपने बालकके शरीरको सिरसे पैर तक दो टुकड़े कर सकते हैं, जहाँपर पितृ-सत्य-प्रतिपालनके लिये श्रीरामचन्द्र जटा धारण करके वनवासी हो सकते हैं, जहाँपर पिताकी तृप्तिके लिये भीष्मदेव आजीवन

ब्रह्मचारी रह सकते हैं, जहाँपर समस्त राज्यसे च्युत होकर वनवास क्लेश सहन करने पर भी महाराज युधिष्ठिर सत्यकी मर्य्यादाको नहीं भूल सकते हैं, वहाँकी जातियोंमें मानसिक, नैतिक और चरित्र सम्बन्धीय कितनी उन्नति हुई थी से सामान्य पुरुष भी विचार कर निर्णय कर सकेंगे। प्राचीन आर्य्यजातिकी उदारता, सरलता, सत्यप्रियता, साहसिकता, शिष्टाचार, सदाचार, दया, परोपकारवृत्ति आदि सभी दैवी सम्पत्तियाँ संसारमें आदर्श रूप हैं।

इस विषयमें केवल आर्य शास्त्रमें कथित प्रमाण ही नहीं अधिकन्तु अनेक विदेशीय भारत-भ्रमणकारी लोगोंने भी आर्य्य-जातिके अपूर्व चरित्र और मानसिक उन्नतिके विषयमें हाथ उठाकर बार बार ऐसा ही कहा है।

पाश्चात्य पण्डित चसारने सत्यधर्म्मको सकल धर्मसे श्रेष्ठ कहा है और हिन्दु शास्त्रमें—

"नाऽस्ति सत्यात्परो धर्म्मः"

कह कर सत्यकी ही प्रतिष्ठा की गई है। आर्य्यजातिकी सत्यवादिताके विषयमें द्वितीय शताब्दिके ऐतिहासिक ऐरियन साहबने भी कहा है:—"मैंने कभी किसी आर्य्यको मिथ्या कहते हुए नहीं सुना है।" ग्रीक ऐतिहासिक ष्ट्रावोने कहा है:— "आर्यगण ऐसी उत्तम प्रकृतिके मनुष्य हैं कि चोरीके भयसे उनके दरवाजेपर ताला नहीं लगाना पड़ता और उन्हें किसी कार्यके लिये इकरारनामा नहीं लिखना पड़ता।" चीन देशीय

प्रसिद्ध भ्रमणकारी हुयेनसांगने कहा है:-"सच्चरित्रता वा सरलताके लिये आर्यजाति चिरकालसे प्रसिद्ध है। वे लोग कभी अन्यायसे किसीकी धन सम्पत्तिको ग्रहण नहीं करते और न्यायकी मर्यादा-रक्षार्थ त्याग स्वीकार करनेमें कुछ भी कुण्ठित नहीं होते।" त्रयोदश शताब्दिके भ्रमणकारी मार्कोपोलोने भारतवर्षीय ब्राह्मणोंकी सत्यनिष्ठाको देखकर कहा था कि पृथ्वीमें ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिसके लोभसे ब्राह्मण मिथ्या भाषण कर सकता है। विचारपति कर्नल श्लिम्यान् साहबने कहा है:—"मैंने सैकड़ों मुकद्दमोंका विचार करते हुए देखा है कि जहाँ पर एक शब्द मिथ्या बोलनेसे किसीकी प्राणरक्षा वा सम्पत्ति रक्षा आदि हो सकती है, वहाँ पर भी आर्यसन्तानने मिथ्या कहना पसन्द नहीं किया है।" अध्यापक यूलियस्स् साहबने कहा है:—"यूरोपकी कोई भी जाति भारतवासियोंकी तरह धर्मपरायण नहीं है"। प्रोफेसर मैक्समूलरने कहा है:—"आर्यजातिमें सत्यप्रियता ही सबसे उत्कृष्ट जातीय लक्षण है। किसीने इस जातिको "असत्य" का लाञ्छन नहीं लगाया है"। ग्रीस देशके प्रसिद्ध सिकन्दरशाह भारतसे जाते समय मेगास्थिनीस नामक जिस दूतको यहाँकी रीति नीतिका पता लगानेके लिये छोड़ गये थे, उसने आर्यजातिके विषयमें कहा है:—"आर्यजातिमें दासत्व-भाव बिलकुल नहीं है, इनकी स्त्रियोंमें पातिव्रत्य और पुरुषोंमें वीरता असीम है। साहसिकतामें आर्यजाति पृथ्वीभरकी अन्य जातियोंसे श्रेष्ठ है, और परि-

श्रमी, शिल्पी तथा नम्रप्रकृति है। यह कदापि अदालतोंमें मुकद्दमे नहीं करती और शान्तिके साथ परस्पर मिलकर निवास करती है"। इस प्रकार प्राचीन इतिहासोंकी चर्चा करनेसे प्राचीन आर्यजातिके मधुर और पूर्ण चरित्रका परिचय मिलता है। जिस समय पृथिवीकी अन्यान्य जातियाँ असभ्यताके घोर अन्धकारमें डूबी हुई थीं, उस समय भारतवर्षमें सभ्यताकी ज्योति सर्वत्र फैली हुई थी और उसी ज्योतिको लेकर ही मनुजीके कथनानुसार पृथिवीकी अन्यान्य जातियाँ सभ्यता और उन्नतिको प्राप्त हुई हैं। दृष्टान्तरूपसे समझ सकते हैं कि खृष्ट जन्मके ५५ वर्ष पूर्व जब पराक्रान्त जुलियस सीजर ब्रिटन-द्वीपपर अधिकार विस्तार करनेको आये थे, तब उन्होंने यह देख कर दुःख किया था कि वे जहाँ पर राज्यविस्तार करनेको आये हैं वहाँके लोग पशुवत् हैं। कच्चा मांस खाना, भूगर्त्तमें रहना, वृक्ष शाखाओंमें विहार करना, विविध रङ्गोंसे शरीरको रञ्जित करना ये सब उनके आचार हैं। उनकी भाषा भी पशुओं-की तरह है; परन्तु जब वीरचूड़ामणि सिकन्दर शाह जुलियस सीजरके तीन सौ वर्ष पहिले भारत विजयार्थ पञ्जाब आये थे तब वे यह देख कर चकित हुए थे कि अपने देशमें रहते समय जिस आर्यजातिको वे हीनवीर्य तथा असभ्य समझा करते थे वह जाति ग्रीक जातिकी शिक्षागुरु है। उन्होंने राजा पोरसके साथ संग्राममें समझ लिया था कि आर्यजातिके समान वीर जाति संसारमें कोई नहीं है। उनका वीरत्व, वेष, भूषण, स्वाभाविक

अपूर्व सौंदर्य, दयाशीलता, निर्भयता, आतिथ्य वृत्ति, धर्मभाव आदि गुणावली मनोमुग्धकर है। उनकी भाषा मंदाकिनीके मृदुमंदनादकी तरह अति मधुर है। जर्मनदेशीय पंडित जोर्णस जार्णाने कहा है "धर्म तथा सभ्यताके प्राचीनत्वके विचार-से पृथ्वीकी कोई भी जाति आर्य्य जातिको समकक्ष नहीं है।" प्रसिद्ध पंडित कोलब्रुकने कहा है "इसी देशसे ज्ञान तथा सभ्यताकी ज्योति पहिले ग्रीसमें गई थी। ग्रीससे रोममें और रोमसे वही ज्योति रोमन जातिके प्रबल प्रतापके समय रोमके द्वारा समस्त यूरोपमें विस्तृत हुई थी।" इन सब प्रमाणोंसे भारतवासी आर्य्यजातिकी अपूर्व सभ्यता तथा उनका नैतिक जीवनके सर्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित होना सिद्ध हो जाता है।

—o—

आधिपत्य और वाणिज्यविस्तार।

प्राचीन कालमें आर्यजाति देशविजय, राज्यविस्तार, वाणिज्य-वृद्धि आदिके लिये पृथ्वीके सब देशोंमें ही गमन करती थी, इसका प्रमाण पश्चिमी तथा इस देशके सभी प्राचीन इतिहासज्ञ पंडितोंने दिया है। ऐतरेय ब्राह्मणमें राजा सुदासके विषयमें लिखा है कि उन्होंने समस्त पृथ्वीको जय करके सर्वत्र ही अपना अधिकार विस्तार किया था। एल्फिन्स्टन और ग्रोन साहबने कहा है कि, पारस्य देशका बहुतसा अंश प्राचीन-कालमें हिंदुओंके अधीन था। कर्नल टाड साहबने कहा है,

मुसलमानी राज्यके पहिले हिंदुओंका अधिकार मध्य एशियाके अनेक स्थानमें था। वेबर साहवने अपने प्रणीत Indian Literature नामक ग्रन्थमें अनेक प्रमाणोंके द्वारा बताया है कि, प्राचीन कालमें ग्रीस और रोमके साथ आर्यजातिका बहुत ही संबंध था। हिंदु राजाओंके प्रासादोंमें ग्रीक स्त्रियाँ दासी-रूपसे रहा करती थीं और वहाँके दूत यहाँ और यहाँके दूत वहाँ प्रायः आया जाया करते थे। इसके सिवाय पृथिवीकी आदिजाति आर्यगण प्राचीन कालमें पृथिवी भरमें विस्तृत होकर राज्यविस्तार और उपनिवेशस्थापन करती थी जिसका चिह्न आज भी सर्वत्र विद्यमान है। दृष्टान्तरूपसे थोड़ासा वर्णन किया जाता है।

पंचदश शताब्दिके बीचमें कोलम्बसके द्वारा अमेरिकाका आविष्कार हुआ था इस बातको पढ़कर नवीन हिंदु बहुत ही आश्चर्यान्वित होते हैं; परंतु उनके पितापितामह आदिने पंच-दश शताब्दिसे कितने सहस्राब्द पहिले अमेरिकाका आविष्कार किया था उसकी खबर दुर्भाग्य, अंधी, हिंदुजातिको नहीं है। यह खबर पाश्चात्य पंडितोंको है। उन्होंने अपने ग्रंथोंमें लिखा है कि, जिस समय यूरोपीय जातिने अमेरिकामें प्रथम उपनिवेशस्थापन किया था, उस समय तक वहाँपर प्राचीन हिंदुओंका आचार-व्यवहार विद्यमान था। यद्यपि भारतके साथ संबंध विच्छिन्न होनेसे वहाँके भारतवासियोंके आचारादिमें अनेक फेर बदल हो गये थे, तथापि आर्य आचारादिका चिह्न

एक बार ही लुप्त नहीं हो गया था। जर्मनीके प्रसिद्ध दार्शनिक और परिभ्रमण करनेवाले बैरन हाम्बोल्ट साहबने कहा है कि, "अमेरिकामें अब भी हिन्दुओंका परिचय चिह्न विद्यमान है।" पेरु-देशके लोगोंके आचारोंके विषयमें चर्चा करते समय मि. पोककने कहा है कि, "पेरुवासियोंके पितृपुरुषगण किसी समय भारतवासियोंके साथ सम्बन्धयुक्त थे।" मि. हार्डिने कहा है कि, "अमेरिकामें जो प्राचीन प्रासाद देखनेमें आते हैं वे सब भारतवर्षके मंदिर-शिखरोंकी तरह हैं।" मि० स्कयारने कहा कि, "दक्षिण भारत और भारतीय द्वीपोंमें जो बौद्धमन्दिर देखनेमें आते हैं, मध्य अमेरिकाकी अनेक अट्टालिकाएँ उसीके अनुकरण पर बनी हुई हैं।" प्रेस्कट् और हेल्प् साहबने अपने अनेक ग्रन्थोंमें अनेक स्थानोंपर लिखा है कि, "भारतीय देवदेवियोंके अनुकरणपर ही अमेरिकामें देव-देवियोंकी मूर्त्तियाँ बनाई जाती थीं और उसी प्रकारसे पूजादि हुआ करती थी।" भारतवर्षकी तरह पृथ्वीपूजा वहाँपर प्रचलित थी। भारतवर्षमें श्रीकृष्णपदचिह्न, श्रीबुद्धपदचिह्न और श्रीदत्तात्रेय आदिके पदचिह्नोंकी पूजाकी तरह मेक्सिकोंमें भी 'कोयेट्जालकोटल्' नामक देवताके पदचिह्नकी पूजा होती थी। भारतवर्षकी तरह वहाँपर भी सूर्य और चन्द्रग्रहणके समय उत्सव होता था। यहाँपर जिस प्रकार राहु द्वारा चन्द्र-सूर्यग्रासकी कथा प्रचलित है, वहाँ पर भी ऐसीही 'मा त्य' नामक दैत्य द्वारा सूर्यचन्द्रग्रासकी कथा प्रचलित थी। मेक्सि-

को देशमें हाथीके शिरसे युक्त एक नरदेवताकी पूजा होती थी। बैरन हम्बोल्ट साहबकी सम्मति है कि, उस देवताके साथ हिन्दुदेवता गणेशका सम्पूर्ण सादृश्य मिलता है। भारतवर्षमें 'दशहरा' उत्सवकी तरह मेक्सिकोमें भी प्रतिवर्ष रामसीताके नामसे उत्सव होता था। सर विलियम जोन्सने कहा है कि, "यह एक प्रख्यात विषय है कि, पेरुदेशके इन्‌सेस् लोग अपनेको सूर्यवंशीय कहते हुए गौरव समझते थे और उनका प्रधान पर्वोत्सव रामसीताका ही उत्सव था।" इसीसे सिद्ध होता है कि, जिस हिन्दुजातिने एशियाके देशदेशान्तरमें जाकर रामसीताका इतिहास तथा आर्य आचारोंका प्रचार किया था, उसीने दक्षिण अमेरिकामें जाकर उपनिवेश स्थापन भी किया था। कितने ही पश्चिमी पण्डितोंने तो यह कहा है कि पृथिवी-की सभी जातियोंकी उत्पत्ति आर्यजातिसे ही हुई है। आर्य-जाति ही सब देशोंमें भिन्न भिन्न समयपर जा बसी है जिससे देश काल और आचारभेदानुसार उनमें अनेक भेद पड़ गये हैं। आचार आदिकी भ्रष्टताके कारण आर्य पदवीसे च्युत होकर वे सब अन्यजाति कहलाने लग गये हैं। मि० पोकक साहबने कहा है कि, "पञ्जावके रास्तेसे असंख्य हिन्दु यूरोप और एशियाके कई स्थानोंमें गये थे और वे उन्हीं देशोंके अधि-वासी बन गये हैं।" प्रोफेसर हीरेनने कहा है कि "अपने ही समाजमें लड़ाई झगड़ेके कारण आर्यगण अन्यदेशोंमें जा बसे हैं, ऐसा न माननेपर भी ऐसा तो अवश्य ही मानना पड़ेगा कि

भारतवर्षमें हिन्दुओंकी अगणित विशाल जातियोंके बसनेके लिये यथेष्ट स्थान नहीं था इसलिये अन्यान्य अनेक देशोंमें प्राचीन हिन्दुओंने उपनिवेश स्थापन किये थे जिससे संसार-भरका विस्तार आर्यजातिसे ही हुआ है।" महाभारतके अनुशासनपर्व और शान्तिपर्वमें भी ऐसी अनेक जातियोंका वर्णन देखनेमें आता है, जो आर्यजातिसे ही क्रियालोपके द्वारा बन गई हैं। यथाः—

शका यवनकाम्बोजास्तास्ताः क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वं परिगता ब्राह्मणानामदर्शनात् ॥
द्राविडाश्च कलिन्दाश्च पुलिन्दाश्चाप्युशीनराः।
कोलिसर्पा माहिषकास्तास्ताः क्षत्रियजातयः ॥
मैकला द्रविडा लाटाः पौण्ड्राः कोन्वशिरास्तथा।
शौण्डिका दरदा दर्वाश्चौराः शर्वरबर्बराः ॥
किराता यवनाश्चैव तास्ताः क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वमनुप्राप्ता ब्राह्मणानामदर्शनात् ॥

(अनुशासन पर्व)

वेदाचारके खण्डित होनेसे तथा ब्राह्मणोंकी विदेश यात्रा बन्द होनेसे शक, यवन आदि जातियाँ क्षत्रिय जातिसे बन गई थीं। इसी प्रकार शान्तिपर्वमें—

यवनाः किराता गांधाराश्चीनाः शवरबर्बराः।
शकास्तुशाराः कंकाश्च पन्हवाश्चान्ध्रमद्रकाः ॥

पौण्ड्राः पुलिन्दा रमठाः काम्बोजाश्चैव सर्वशः।
ब्रह्मक्षत्रप्रसूताश्च वैश्याः शूद्राश्च मानवाः॥
कथं धर्मांश्चरिष्यन्ति सर्वे विषयवासिनः।
मद्विधैश्च कथं स्थाप्याः सर्वे वै दस्युजीविनः॥

यवन, किरात, चीन, गान्धार आदि जो अनेक जातियाँ चतुर्वर्णसे बन गई हैं, उनका धर्म क्या होगा और उनपर शासन भी किस प्रकारसे होगा ऐसा प्रश्न हो रहा है। इसके द्वारा प्राचीन कालमें आर्यजाति पृथ्वीकी अन्य सब जातियों-पर आधिपत्य करती थी यह भी सिद्ध होता है। मनसियर डेलबो साहबने कहा है कि, हजारों वर्ष पहिले जो सभ्यता गङ्गाके तटपर विस्तारको प्राप्त हुई थी, उसीका प्रभाव आज तक यूरोप और अमेरिका भोग कर रही है। और समस्त सभ्य जगत्की दश दिशाओंमें वही प्राचीन आर्यजातीय सभ्यता विस्तृत हो गई है। प्राचीन आर्यगण इस प्रकार भिन्न २ देशोंमें उपनिवेश स्थापन करनेके लिये स्थलपथ और जलपथ दोनोंके द्वारा ही सर्वत्र जाया आया करते थे। यवद्वीप वोर्णियो आदि अतिक्रम करके प्राचीन हिन्दूगण अमेरिका जाते थे, ऐसे प्रमाण अनेक स्थानोंमें पाये जाते हैं। पाश्चात्य पण्डितोंकी आलोचना द्वारा सिद्ध हुआ है कि, वेरिङ्ग प्रणाली (Strait) का अस्तित्व पहले नहीं था। उस समय रूस देशके उत्तरपूर्व प्रान्तीय स्थानोंके साथ उत्तर अमेरिकाके आलस्का देशका संयोग था, जिससे भारतवासी चीन, मंगोलिया और साइ-

वेरिया होकर अमेरिका जाया करते थे। बौद्धधर्मके प्रादुर्भावके समय बौद्ध मिशनरीगण अमेरिकामें जाया आया करते थे, चीन देशके इतिहासमें इसका प्रमाण मिलता है। प्राचीन मिश्र या वर्तमान अफ्रिका देशमें प्राचीन आर्य्योंने जो उपनिवेश स्थापन किया था, उसका वृत्तान्त इतिहासमें कहा गया है। कई एक आचारभ्रष्ट क्षत्रियोंको राजा सगरने समाजच्युत किया था; वे ही शक, यवन और पारद कहे जाते हैं। भारतवर्षको छोड़कर इन लोगोंने नाना देशोंमें जाकर उपनिवेश स्थापन किये थे। किसी किसीकी सम्मति है कि इन भ्रष्ट क्षत्रियोंमेंसे 'पारद' लोगोंके द्वारा ही 'पारस्य' देशका नामकरण हुआ है और किसी किसीके मतमें परशुरामके अनुचरगणके द्वारा ही पारस्य देशका नामकरण हुआ है। श्रीरामचन्द्रके किसी वंशजके द्वारा रोम राज्यकी प्रतिष्ठा और मगधके राजाओंके द्वारा ग्रीस राज्यकी प्रतिष्ठा अनेक पाश्चात्य पण्डितोंकी गवेषणाके द्वारा सिद्ध हुई है। प्राचीन ग्रीसका नाम यवनराज्य था। जर्मन देशमें मनुके वंशजोंने उपनिवेश स्थापन किया था। तुरस्क और उत्तर एशियामें हिन्दुओंका ही आधिपत्य था। इन बातोंके अनेक प्रमाण मिलते हैं। चीन देशमें आर्य्योंका आधिपत्य जमा था, इसका वृतान्त चीन देशीय धर्म और जातितत्त्वके देखनेसे निश्चित होता है। अब भी चीन देशके लोग अपनेको आर्यवंशीय कहकर परिचय देते हैं। प्राचीन ब्रिटेन द्वीप भी किसी समय आर्य्योंका अधिकारभुक्त था, आजकल अनेक

पाश्चात्य पण्डितोंको गवेषणाके फलसे ऐसा ही स्वीकार करना पड़ता है। वे कहते हैं कि प्राचीन ब्रिटेनके 'ड्रुइद' पुरोहितोंकी उत्पत्तिके मूलमें आर्यब्राह्मण अथवा बौद्धधर्मीय याजकोंका प्राधान्य अवश्य ही विद्यमान था। कालकी कुटिलगतिसे प्राचीन आर्योंके अधिकारभुक्त अनेक स्थानोंके नाम परिवर्तन होनेसे आर्यजातिका अधिकार-सीमाका पता ठीक ठीक नहीं चलता; परन्तु थोड़ा ही ध्यान देकर विचार करनेसे आर्यजातिके 'पृथिवी पाल' लक्षणकी चरितार्थता पूर्णतया प्रतीत हो जायगी। आर्यजातिका अधिकारभुक्त प्राचीन गान्धार वर्तमान कन्दाहार है। प्राचीन काम्बोज वर्तमान काम्बोडिया है। प्राचीन पन्हव और पारद वर्तमान पारस्य है। प्राचीन यवन आधुनिक ग्रीस है। प्राचीन दरद वर्तमान चीन है। प्राचीन खस वर्तमान पूर्व यूरोप है। इस तरह प्राचीन देशोंकी नामावलीका पता लग सकता है, जिससे आर्यजातिका समस्त पृथिवी पर अधिकार सिद्ध होता है।

प्राचीन कालमें इस प्रकार पृथ्वीके सर्वत्र जाने आनेके लिये आर्यगणके पास यान आदिका भी अभाव नहीं था। प्राचीन इतिहास पुराणादिमें जो द्रुतगामी रथ, पोत आदिका प्रमाण मिलता है जिनके द्वारा थोड़े समयमें ही स्थल, जल और आकाश मार्गमें बहुत दूर तक जानेकी बात बताई गई है, उनके द्वारा आधुनिक जहाज, बेलून, येरोप्लेन आदिका अस्तित्व सिद्ध होता है। ऋग्वेदके प्रथम मण्डलमें ३७ सूक्तकी प्रथम ऋक् यह है:—

क्वीलं वः शर्द्धोमारुतमनर्वाणं रथे शुभम्।
कण्वा अभिप्रगायत।

इसमें 'अनर्वाणम्' शब्दका अर्थ 'अश्वरहित' है और 'मारुत' शब्दका तात्पर्य्य मरुत्दत्त या बाष्पदत्तबलसे है। अतः पूरे ऋक्का यह अर्थ निकलता है कि हे कण्वगोत्रोत्पन्न महर्षिगण! जिस प्रकारसे बाष्पके प्रभावसे अश्वरहित रथ चल सकता है उसकी शिक्षा हमें दीजिये। अतः इस ऋचाके द्वारा अश्वरहित बाष्पीय रथ प्राचीन कालमें था ऐसा सिद्ध हुआ। ऋग्वेदके प्रथम मण्डलके ६७ सूक्तमें लिखा है:—

द्विषो नो विश्वतो मुखाति नावेव पारय।
स नः सिन्धुमिव नावयाति पर्षाः स्वस्तये॥

हे विश्वतोमुख देव! तुम हमारे शत्रुओंको जहाज़से पार करनेकी तरह दूर भेज दो और हमारे कल्याणके लिये हमें जहाज़के द्वारा समुद्र पार ले चलो। इस प्रकार और भी अनेक मन्त्रोंके द्वारा प्राचीन कालमें समुद्र पोत आदिके भी अस्तित्वका प्रमाण मिलता है। केवल समस्त पृथिवी पर अधिकार-विस्तारके लिये ही नहीं, अधिकन्तु वाणिज्य आदिके लिये भी प्राचीन आर्य्यगण पृथिवीमें सर्व्वत्र जाया आया करते थे। ऋग्वेदके चतुर्थ मण्डलके ५५ सूक्तमें धनलाभेच्छु वणिक्गणकी समुद्रयात्राका वृत्तान्त लिखा हुआ है। प्रोफेसर म्याक्स डंकार-ने कहा है कि "खृष्टजन्मके २००० वर्ष पहिले आर्य्यजाति जहाज़ प्रस्तुत करना जानती थी और समस्त पृथिवीके साथ उसका

वाणिज्यकार्य चलता था।" प्रोफेसर हीरेन साहबने कहा है कि "प्राचीन हिन्दूगण एक प्रकारका जलयान प्रस्तुत करना जानते थे जिसपर चढ़कर करमण्डलतट, गङ्गातटस्थ अनेक देश, ग्रीस और मछलिपट्टनके अनेक प्रदेशोंके साथ वे वाणिज्य करते थे।"

वाणिज्यके विषयमें प्राचीन आर्य-इतिहासकी चर्चा करनेसे पता लगता है कि आज कलकी तरह प्राचीन हिन्दुजाति विदेशीय लोगोंके हाथमें समस्त वाणिज्यधनको सौंपकर दीन हीन भिखारी नहीं हो गई थी किंतु अपनी अनुपम वाणिज्यसमृद्धिके द्वारा समस्त संसारकी अधिपति थी। प्राचीन कालमें भारत जो अतुल ऐश्वर्यसम्पन्न होनेके कारण स्वर्णभूमि कहलाता था, आर्यजातिका वाणिज्य ही इसका प्रधान कारण था। मैक्स डङ्कार साहबने कहा है कि "खृष्ट जन्मसे दश शताब्दि पहिले फिनिशियन् जातिके साथ आर्यजातिका हस्तिदन्त, चंदन-काष्ठ, स्वर्ण, रौप्य, मणि और मयूर आदिका वाणिज्य चलता था।" यह एक प्रसिद्ध बात है कि ग्रीकजातिने भारतवासियोंसे ही चीनीका व्यवहार पहिले सीखा है। अंग्रेजी सुगर शब्द संस्कृत 'शर्करा' से ही बना हुआ है। पश्चात् अरब, पारस्य और यूरोपके अनेक देशोमें इसका प्रचार हुआ है। मि० मंडारने कहा है कि "सेलूसिडिके राज्यकालमें भी सिरियाके साथ आर्यजातिका वाणिज्य चलता था। भारतवर्षके लौह, अलंकार और बहुमूल्य वस्त्र जहाजोंके द्वारा यहाँसे

शब्याबिलन और टायर देशमें जाया करते थे।" मिश्र देशके साथ वाणिज्य संबंधके विषयमें तो पहिले ही कहा गया है। रेशम, प्रवाल, मुक्ता, हीरा आदिका व्यापार सदा ही मिश्र और तदन्तर्गत अलगजेरिड्रयासे था। हस्तिदन्त और नीलका वाणिज्य ग्रीसके साथ प्राचीन आर्यजातिका था। "रोमके साथ भारतवासियोंका नाना प्रकारके सुगन्धी द्रव्य और मसालोंका व्यापार था", ऐसा प्रो० हीरेन साहबने कहा है। प्राचीन रोम देशकी स्त्रियाँ भारतीय रेशम और सुगंध द्रव्यको इतना पसंद करती थीं कि सोनेके दामसे उसे खरीदती थीं। प्लैनी साहवने दुःख प्रकाश किया है कि इस प्रकारसे रोमके सकल प्रान्तोंसे भारतवर्षमें प्रतिवर्ष ४० लाख रुपया चला जाता था।

केवल जलपथमें ही नहीं अधिकन्तु स्थलपथमें भी प्राचीन आर्यजातिने समस्त पृथिवीके साथ वाणिज्य संबंध स्थापन किया था। चीन, तुर्किस्तान, पारस्यदेश, बैबिलोन, मिशर, ग्रीस, रोम आदि देशोंके साथ आर्यजातिके स्थलवाणिज्यका भी संबंध था। प्रो० हीरेनने कहा है कि "पश्चिम एशियाके पामीरियान लोगोंके साथ हिंदुओंका स्थलपथमें वाणिज्य था। इस पामीराके पथसे हिन्दुगण रोममें जाया आया करते थे। वहाँसे सिरियाके वंदरमें होकर अनेक पश्चिमी देशोंके मार्ग बने हुए थे"। स्थलपथसे वाणिज्यका दूसरा भी एक मार्ग बना हुआ था, यथा-हिमालयको पारकर अकसूस, वहाँसे कास्पियन

सागर और वहाँसे क्रमशः यूरोपके बाजारोंमें। इस प्रकार कई मार्गोंसे हिंदुजातिका स्थलपथसे वाणिज्य चलता था। यही प्राचीन कालमें आर्यजातिके समस्त पृथिवीपर आधिपत्यविस्तार तथा वाणिज्य-विस्तारका इतिवृत्त है।

प्राचीन शिल्पोन्नति।

प्राचीन भारतमें शिल्प विद्याकी पूर्णोन्नति हुई थी। आर्यगणका चतुर्थ उपवेद स्थापत्यवेद ही इसका साक्षी है। यदि च आजकलकी तरह कपड़े बुननेकी कल, मैदा पीसनेकी कल, सिलाई करनेकी कल, सूत कातनेकी कल, आदि कलें प्राचीन कालमें नहीं थीं, तथापि प्राचीन भारतमें देशोन्नति और धर्मोन्नतिकारिणी शिल्पविद्या और विज्ञान-विद्यामें कितनी उन्नति हुई थी इसकी धारणा भी आजकलके लोग नहीं कर सकते। आर्यशिल्पकी उन्नतिके चमत्कारोंका वेदमें भी वर्णन किया हुआ है। सहस्र द्वार और सहस्र स्तम्भयुक्त अट्टालिका, लोहनिर्मित नगर और प्रस्तरनिर्मित पुरीका वर्णन ऋग्वेदमें किया गया है। यह भारतवर्षकी अपूर्व शिल्पनिपुणता का ही कारण है कि पूर्व कालमें भारत ऐश्वर्यके लोभसे लुब्ध होकर विदेशीय नरपति साईरस, डेरायस, सेमीरामिस और अलेकजण्डर आदि वीरगण तथा मध्य कालमें चंगेजखाँ, महमूद गजनवी, तैमूरलङ्ग और बाबरआदि योद्धागणऔर पिछले

दिनों यूरोपके स्पेनीज, पर्त्तुगीज, फ्रेंच, अंग्रेज आदि जातिगण भारतकी इस पवित्र भूमिमें आये थे। यह भारतवर्षकी शिल्प-निपुणताका ही कारण है कि प्रथम मुसलमान राजाओंने भारत-पर अधिकार जमाया था और अब अंग्रेज जातिने भारतपर अधिकार विस्तार किया है। यद्यपि अब उस शिल्पनिपुणताका यहाँ नाममात्र भी नहीं रहा, तथापि यह कहना ही पड़ेगा कि, उसके कारण ही इन विदेशीय लोगोंकी दृष्टि भारतपर पड़ी थी। आज दिन भी प्राचीन इतिहास, भारतवर्षके प्राचीन मन्दिर आदिके ध्वंसावशेष और पुराणोंकी अद्भुत गाथाएँ इस शिल्पनिपुणताका प्रमाण भली भाँति दे रही हैं। मय-दानव निर्मित युधिष्ठिरकी राजसभाका वर्णन महाभारतमें पढ़कर कौन आश्चर्यित न होगा? राजसूययज्ञके समय मय-दानवने जो सभागृह बनाया था उसकी तुलना संसारमें नहीं हो सकती। उस सभामें उन्होंने एक अनुपम सरोवर निर्माण किया था उसमें मणिमय कमल और काञ्चनमय कुमुद सुशोभित थे, अनेक चित्रविचित्र पक्षी खेलते थे। खिले कमल और सुवर्ण-निर्मित मत्स्य कूर्मादिकी विचित्रता और उस निर्मल सरोवरके चित्रको वास्तविक सरोवर समझकर अनेक राजपुरुष मुग्ध और भ्रांत होकर उसमें गिर पड़े थे। इस प्रकारका शिल्पवै-चित्र्य समस्त पृथिवीमें दुर्लभ है।

आजकल रेलगाड़ीको देख सब लोग आश्चर्य करते हैं; परन्तु भारतवर्षके प्राचीन विमान, अस्त्र, शस्त्र और नाना यान्त्र

आदिके वर्णनका पाठ करनेसे यह स्वतः ही सिद्ध हो जायगा कि, यद्यपि यूरोपने शिल्प-विद्यामें बहुत ही उन्नति की है, तथापि उसकी बुद्धिमें अभीतक यह बात नहीं आती कि, किस प्रकारसे प्राचीन आर्यौंने उन पदार्थोंकी सृष्टि की थी और किस प्रकारसे भारतने शिल्प विद्यामें इतनी उन्नति कर डाली थी। थोड़े ही दिन पहिले अधःपतित भारतकी जो शिल्प-विद्या थी, दीन हीन भारतवासी भी जो काश्मीरी शाल, ढाकाके वस्त्र, काशी आदि स्थानोंके पट्टवस्त्र और नाना सुवर्ण, रौप्य, रत्न आदिसे जड़ित आभूषण आदि बनाया करते थे उसकी समानता अभी तक शिल्पनिपुण यूरोपसे नहीं की गई है। वस्त्रशिल्पके विषयमें प्रसिद्ध है कि किसी समय एक शिल्पीने अम्बारीके सहित हाथीको भी ढाक देनेवाले मलमलके थानको एक बाँसकी नलीमें बन्द करके अकबरको नज़र किया था। ढाकेमें दस १० गज लम्बा और एक हाथ चौड़ा मलमलका थान जो खास तौर पर बनता था, ८ तोला वजनका होता था और अंगूठीके छेदसे आर पार हो जाता था। ढाकाके रेसिडेन्टने एक बार लिखा था कि, २५० मील लम्बा सूत केवल आधसेर रूईमें तैयार किया गया था और सुनार गाँवमें १७५ हाथ लम्बे सूतका वजन एक रत्ती पाया गया था।

मिस मैनिङ्गने कहा है कि "प्राचीन आर्य्यजातिकी शिल्पकला ऐसी अपूर्व थी कि यूरोपके दर्शक लोगोंको उनकी प्रशंसा करनेके लिये योग्य शब्द ही नहीं मिलते थे। वे लोग उनकी

सुन्दरता और कारीगरीको देखकर विस्मयसमुद्रमें एकदम डूब जाते थे।" प्राचीन ग्रीक और मिश्र देशकी शिल्पकलाके साथ तुलना करके प्रोफेसर हीरेन साहबने कहा है कि "मूर्तियोंका निर्माण और बाहरकी सजावटमें आर्यशिल्प ग्रीस और मिश्र-देशके शिल्पसे बहुत उन्नत था।" कर्नल टाड साहबने कहा है कि, "भारतीय प्राचीन स्तम्भ और मूर्ति आदिके देखनेसे मालूम होता है कि, मानो कलासुन्दरीने अपनी समस्त सुन्दरताको प्राण खोलकर भारतवर्षमें प्रकट कर दिया है। यहाँ पर सभी शिल्पकौशल पूर्णता-पद पर प्रतिष्ठित हो गया है।" वैरन डाल-बर्ग साहबने द्वारकापुरीकी शिल्पकलाको देखकर उसे "चमत्कार पुरी" कह दिया था और कहा था कि, "प्राचीन आर्य्यजातिने यहाँ पर शिल्पविद्याको पृथिवीभरकी अन्य सब जातियोंकी अपेक्षा पूर्णता पर पहुँचाया है।" इलोरा आदि स्थानोंके गुफा-मन्दिर, श्रीजगन्नाथ आदि देवताओंके देवालय, चित्तौर आदि-के दुर्ग, कटक आदि प्राचीन स्थानोंके नदीबन्ध, आगरेका ताज-महल आदि प्राचीन स्थानोंके देखनेसे प्राचीन भारतकी शिल्प-उन्नतिका दृढ़ प्रमाण मिल सकता है। इलोराके गुफामन्दिरको देखकर तो पश्चिमी लोग स्तब्ध हो गये हैं। उनकी बुद्धिमें ही यह बात नहीं आती कि, पहाड़ खोदकर इतनी मूर्तियाँ और इस प्रकारके मकानात कैसे बन सकते हैं। प्रोफेसर हीरेनने इसके विषयमें कहा है कि, "इलोराके गुफाद्वारमें प्रवेश करते समय हृत्कम्प होता है कि, ऐसे हल्के स्तम्भोंके ऊपर इतना

विशाल छत्र कैसे रक्खा गया है। इसको सोचकर प्राचीन आर्यशिल्पकी अपूर्वताके विषयमें अनुमान होता है। पहाड़के गात्रपर खोदा हुआ इस प्रकारका शिल्पकलायुक्त सुंदर मंदिर पृथिवीमें और कहीं भी नहीं है। प्राचीन आर्यजातिकी शिल्प-विद्याका यह अद्वितीय प्रमाण है। फर्गुसन साहबने कहा है कि "डाट बनानेका कौशल प्राचीन आर्य्य जाति ही जानती थी और यह कौशल भारतवर्षसे ही अन्यदेशोंमें प्रचारित हुआ है।" किसी किसीका यह कहना है कि सारासेन जातिने ही प्रथम डाट निर्माणका आविष्कार किया था। परन्तु कर्नल टाड साहबने स्वप्रणीत राजस्थान नामक ग्रंथमें प्रतिपादन किया है कि सारासेन जातिने प्राचीन आर्य्यजातिसे ही उस प्रकारके डाट बनानेकी पद्धति सीखी थी। इस प्रकारसे अनुसन्धान द्वारा सिद्ध होता है कि प्राचीन आर्य्यजातिने स्थापत्य विद्या तथा शिल्प-कलामें विशेष उन्नति की थी, जिसका कङ्काल आज भी सर्वत्र देखनेमें आ रहा है।

—:o:—

चिकित्सा-विज्ञानकी उन्नति।

अन्य विद्याओंकी तरह चिकित्साविज्ञानमें भी भारतवर्ष ही आदि गुरु है। अध्यापक विलसनने कहा है कि—"प्राचीन हिन्दुजातिने रोगनिदान, साधारण चिकित्सा तथा शस्त्र-चिकित्सामें बहुत ही उन्नति की थी। उनका निदानशास्त्र बहुत

ही पूर्ण शास्त्र है ।" वीलियम हन्टर साहबने कहा है कि "चिकित्सा शास्त्रके सकल विभागकी औषधियाँ प्राचीन हिन्दुओंको ज्ञात थीं । शरीरके प्रत्येक अङ्ग प्रत्यङ्ग तथा नाड़ी, पेशि, स्नायु आदिका उनको उत्तम ज्ञान था । उनके निदान-शास्त्रमें धातु, उद्भिद् तथा जीव जगत्से अनेक औषधि-संग्रहका विवरण पाया जाता है, जिससे पश्चिमी चिकित्सा शास्त्रवेत्ताओंने भी बहुत कुछ शिक्षा पाई है ।" अध्यापक वेवर साहबने कहा कि "वैदिक युगमें पशु चिकित्साका विशेष ज्ञान हिन्दुओंको था, क्योंकि उनके प्रत्येक अङ्गका पृथक् २ नाम उनके चिकित्सा-शास्त्रोंमें मिलता है ।" वीलियम हन्टार, मिस मैनिङ्ग आदि सभीने एकवाक्य होकर कहा है कि प्राचीन आर्यजातिसे ही चिकित्साशास्त्र पूर्वकालमें मुसलमानोंने सीखा था । यह विद्या भारतसे ही अरबदेशमें गई थी और बगदाद् आदि देशोंमें आकर ग्रीस देशके लोगोंने अरबवासी मुसलमानों से आर्यजातिकी इस चिकित्सा विद्याको सीखा था । मद्रासके गवर्नर लार्ड एम्‌थिल साहबने १९०५ सालके फरवरी महीनेके लेकचरमें यही बात कही थी कि "भारतसे ही चिकित्सा विद्या अरबमें और अरबसे यूरोपमें गई थी । इतना तक कि चेचक रोगके दूर करनेके लिये तथा प्लेगविष नाशके लिये जो टीका आदि दिया जाता है उसकी भी शिक्षा आर्यजातिसे ही यूरोप-के लोगोंने प्राप्त की है ।"

चिकित्सा विद्यामें जोजो विषय रहनेसे उसकी पूर्ण उन्नति

समझी जा सकती है, वे सभी हिन्दु-आयुर्वेदमें हैं। शस्त्रविद्या, रसायनविद्या, धातुप्रयोगविद्या और काष्ठादि प्रयोगविद्या सभी आयुर्वेदमें पाई जाती हैं। दूसरी ओर जल चिकित्सा (Hydropathy), शस्त्रचिकित्सा, अर्कचिकित्सा आदि सभी बातें इस सिद्धान्तमें मिलती हैं। यहाँ तक कि डा० हेनिमन द्वारा आविष्कृत होमियोपेथिक चिकित्साका जो 'विषस्य विषमौषधम्' नामक मौलिक सिद्धान्त है वह भी आयुर्वेदमें पाया जाता है। आयुर्वेद आठ तन्त्रोंमें विभक्त है; यथाः—शल्प, शालाक्य, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्य, अगद, रसायन और वाजीकरण। इन आठ प्रकारके चिकित्सातंत्रोंमें शरीरविज्ञान, देहविज्ञान, शस्त्रविज्ञान, धात्रीविज्ञान, भैषजविज्ञान और रोग-निदान, सभी विषय वर्णित किये गये हैं। केवल मनुष्यकी चिकित्सा ही नहीं पशु आदिकी चिकित्साप्रणाली भी आयुर्वेदमें वर्णित है। कक्षीवानकी कन्या घोषा कुष्ठरोगसे आक्रान्त हो गई थी, अश्विनीकुमारोंने उसको रोगमुक्त किया, तब उसका विवाह हुआ था। कण्वऋषि अन्धे हो गये थे, निषधपुत्र बधिर हो गये थे, वध्रिमतीके पति नपुंसक हो गये थे, परन्तु प्राचीन आर्यजातिके आयुर्वेदशास्त्रकी ही महिमा है, जिससे ऐसे ऐसे कठिन रोग भी आराम हो जाया करते थे। आर्यचिकित्सा-विद्यामें विशेषता यह है कि उसने स्वतन्त्ररूपसे काष्ठादिक और धातुज औषधियोंकी उन्नति की है। कोई आचार्य केवल काष्ठादि औषधियोंकी ही व्यवस्था कर गये हैं और कोई केवल

धातुज औषधियोंको ही प्रसिद्ध कर गये हैं। आयुर्वेदोक्त चिकित्साशास्त्र कितनी उन्नतिपर पहुँचा था सो इनके नाड़ीज्ञानशास्त्रके पाठ करनेसे ज्ञात हो सकता है, जिसकी सहायतासे नाड़ीपरीक्षा द्वारा सकल प्रकारके रोगोंका भली भाँति निदान हो सकता है और जिसमें विलक्षणता यह है कि एकमात्र नाड़ीज्ञानसे ही तीन मास, छः मास अथवा उससे अधिक काल पूर्व ही भविष्यत् रोगका ज्ञान हो सकता है। यह नाड़ीज्ञानशास्त्र इतना गंभीर और सूक्ष्म है कि आजतक पश्चिमी विद्वान् उसको समझ नहीं सके हैं। इसके सिवाय शस्त्रचिकित्सामें भी प्राचीन आर्योंने बहुत उन्नति की थी। डाक्टर रेली साहबने बड़ी प्रशंसाके साथ मुक्तकण्ठ होकर कहा है:— "प्राचीन भारत-वासियोंके ग्रन्थ देखनेसे प्रकट होता है कि वे शस्त्रचिकित्सामें विशेष निपुण थे। प्रायः १२७ प्रकारके शस्त्रोंका वे शरीर पर प्रयोग किया करते थे और शस्त्रव्यवहारके साथ नाना प्रकारकी औषधियोंका भी प्रयोग किया करते थे।" वेबर साहबने कहा है कि "शस्त्रचिकित्सामें (Surgery) प्राचीन आर्यगण पूर्णता प्राप्त कर चुके थे और इस विद्यामें पश्चिमी लोग अभी उनसे बहुत कुछ सीख सकते हैं। जैसा कि विकृत कान या नाकको सुधारकर नया बना देनेकी चिकित्सा पश्चिमी चिकित्सकोंने प्राचीन हिन्दुओंसे ही प्राप्त की है।" डाक्टर हन्टर साहबने भी ऐसी ही आर्यशस्त्रचिकित्साकी बड़ी प्रशंसा की है। मिस म्यानिङ्गने कहा है कि "प्राचीन हिन्दुओंके शस्त्र

चिकित्सायन्त्र ऐसे उत्तम और सूक्ष्म हुआ करते थे कि उनसे केश तक सीधे लम्बे फाड़े जा सकते थे।" इस प्रकारसे पश्चिमी विद्वान् तथा एतद्देशीय सभी पुरुषोंने प्राचीन आर्यजातिके चिकित्साशास्त्रकी महिमा प्रकट की हैं।

आर्य-वीरता और युद्धविद्या।

स्वाधीन जाति मात्र ही वीरताका आदर करती है और देशके कल्याणके लिये जीवन उत्सर्ग करनेमें परम गौरव समझती है; परन्तु प्राचीन आर्यजातिमें यह पूर्णताका ही लक्षण है कि, उसकी वीरताके साथ अपूर्वता और धर्मभाव भरा हुआ था। प्राचीन आर्य-जाति आधुनिक पाश्चात्य जातिकी तरह मदोन्मत्त होकर और धर्मको तिलाञ्जलि देकर युद्ध नहीं करती थी; किन्तु धर्मका विजय और अधर्म्मका पराजय करना प्राकृतिक नियम और भगवदाज्ञा है, इसलिये उसीमें निमित्त मात्र बन कर सहायता करनेके लिये युद्ध करती थी। भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य दुर्योधनके अन्नसे प्रतिपालित हुए थे, इसलिये उनका उनके पक्षमें होकर युद्ध करना धर्मानुकूल था; परन्तु दुर्योधन के अधार्मिक होनेके कारण उसका नाश भी धर्मानुकूल था। इसलिये भीष्म पितामह और आचार्य द्रोणने पाण्डवोंके विरुद्ध लड़ाई करने पर भी उनको अपनी मृत्यु कैसे हो सकती है सो

बताकर धर्मका विजय कराया था। दुर्योधन पाण्डवोंका परम शत्रु था, तथापि जिस समय युद्धमें विजयी होनेके लिये क्या युक्ति है इसके जाननेके लिये दुर्योधन युधिष्ठिरके पास आये तो युधिष्ठिरने अपने ही नाशका उपाय दुर्योधनको अकपट चित्तसे बता दिया था। 'अश्वत्थामा मर गये हैं' इसी एक मिथ्या वाक्यके कहनेसे द्रोणाचार्यकी मृत्यु होगी इसलिये जब युधिष्ठिरको मिथ्या कहनेका परामर्श दिया गया तो उन्होंने उत्तर दिया किः—"इन्द्रप्रस्थका राज्य तो सामान्य है, यदि स्वर्गका राज्य और ब्रह्मलोकभी मिल जाय तथापि युधिष्ठिर मिथ्या कभी नहीं कहेगा।" ऐसे अनेक आदर्श मिलते हैं जिनसे प्राचीन आर्यगणमें धर्मानुकूल वीरताका लक्षण प्रमाणित होता है। आर्यजातिमें स्थूल सम्पत्तिको लेकर संग्रामका कारण उपस्थित होने पर भी चित्तकी उदारता नष्ट नहीं होती थी। धार्मिक पाण्डवोंपर दुष्ट कौरवोंने संसारभरमें ऐसा कोई अत्याचार और नृशंसता नहीं है जिसका प्रयोग नहीं किया था; परन्तु ज्येष्ठ, आत्मीय सदा ही पूज्य हैं इस लिये प्रतिदिन युद्धके अन्त में पाण्डव जन्मान्ध धृतराष्ट्रको प्रणाम करनेको जाया करते थे और दुर्योधनकी स्त्रियाँ जिस समय तीर्थयात्रामें विपद्ग्रस्ता हो गई थीं, उस समय समस्त पाण्डवोंने मिलकर उनकी रक्षा की थी। निरस्त्र शत्रुपर प्रहार करना और निर्बल शत्रुपर अत्याचार करना और अन्याय्य रीतियोंसे युद्ध करना आर्यजाति स्वप्नमें भी नहीं जानती थी। एवं जहाँ पर आर्यजातिमें इस उदाहरण

और महत्त्वके विरुद्ध कोई भी कार्य हुआ है, तो उसकी बड़ी भारी निन्दा की गई है। प्रसंगोपात्त आर्य्यजातिके शस्त्रप्रयोगका एक इतिहास कहना उचित समझा गया। अर्जुनने खाण्डव दहन करते समय मय नामक दानवराजका प्राण बचाया था। उस समय कृतज्ञताका परिचय देनेके लिये दानवराज मयने अर्जुनसे कहा कि मेरे पास जो अलौकिक दानवास्त्र हैं, मैं आपको अपने प्राण बचानेके बदलेमें देकर कृतकृत्य होना चाहता हूँ। पश्चात् अर्जुन द्वारा उक्त दानवास्त्रोंका फल पूछने पर मय दानवने उत्तर दिया कि ये अस्त्र ऐसे अलौकिक हैं कि इनके द्वारा आकाशमें उड़ कर वा अदृश्य होकर शत्रुका नाश किया जा सकता है, जलमें डूबकर अदृश्य होकर शत्रुओंका क्षय हो सकता है, शत्रुके सम्मुख न जाकर अतिदूरसे शत्रुका नाश हो सकता है इत्यादि। इन लक्षणोंको सुनकर अर्जुनने अस्त्रोंकी प्रशंसा की; परन्तु यह कहा कि हम आर्य्य हैं, ये सब अनार्य्यसेवित अस्त्र हमारे काम नहीं आ सकते; इस कारण हम इनके लेनेके अनिच्छुक हैं इत्यादि। इस इतिहाससे स्पष्ट ही प्रमाणित होगा कि आर्य्यगण किस प्रकारके धर्मलक्ष्ययुक्त युद्धके पक्षपाती थे और अद्भुत और अलौकिक शक्तिविशिष्ट होने पर भी दानव-सेवित अस्त्रोंके प्रयोग करनेमें भी अधर्म्म समझते थे। आर्यगणका जो युद्ध-कौशल था उसमें छलका सम्बन्ध नहीं था और वीरताके विरुद्ध युद्धको वे पापजनक समझते थे। शत्रुको सामने रखकर उसको सचेत करके

उसके साथ युद्ध करना आर्यंयुद्धनीतिका मूलमन्त्र था। छिपकर शत्रुको मारना, आकाशमें, जलमें अथवा स्थलमें स्वयं अदृश्य रह कर शत्रुका संहार करना, भागते हुए पीठ दिखानेवाले शत्रुको मारना, रात्रिमें युद्ध करना, सोते हुए शत्रु-पर अस्त्रप्रयोग करना, ये सब बातें आर्यगणकी युद्धविद्यामें पापजनक समझी जाती थीं। दानवगण ऐसी युद्धविद्याको अपने काममें लाते थे, किन्तु आर्यगण ऐसा करनेपर अति निन्दनीय समझे जाते थे। आजकलकी युद्धविद्यामें और आज-कलके युद्धके अस्त्र-शस्त्रोंमें अनेक अद्भुत अलौकिकता रहने पर भी येही बातें अधिक पाई जाती हैं। आर्यगण इन बातोंको आर्ययुद्धनीतिके अति-विरुद्ध समझते थे, इसी कारण ऐसे अस्त्र-शस्त्रोंकी उन्नति नहीं की थी।

केवल वीरता ही नहीं अधिकन्तु युद्ध विद्याकी भी पूर्णो-न्नति प्राचीन आर्यजातिमें हुई थी। मुसलमान आक्रमणसे पूर्व-वर्त्ती समरविद्याको देखकर कोई कोई भावुक ऐसा कहने लगते हैं कि, समरविद्यामें भारतवर्षने वैसी उन्नति नहीं की थी जैसी आज दिन यूरोप कर रहा है। उनका यह विचार भी भ्रमपूर्ण ही है। जब देखते हैं कि, आर्यजातिके चार उपवेद अर्थात् आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद और स्थापत्यवेदमेंसे एक उपवेद धनुर्वेद युद्ध विद्याकाही प्रकाशक है, जब देखते हैं कि, प्राचीन आर्यजातिके युद्धशस्त्र तथा अस्त्र चलानेकी रीति कैसी अद्भुत थी जिसका विदेशीय गणके लिये समझना भी आज कठिन हो रहा

है, तब कैसे कहेंगे कि उनकी समरविद्या वर्त्तमान यूरोपीय समरविद्यासे न्यून थी। यह तो ऐतिहासिक प्रमाण ही है कि, जब ग्रीसके अधिवासी तथा मुसलमान सम्राट् भारतमें आक्रमण करनेको आये थे तो वे भारतकी पैदल, अश्वारोही, रथी और हस्त्यारोही, सेनाको देखकर मोहित हुआ करते थे। पृथिवी विजयी महावीर अलकजंडर पृथिवीकी किसी जातिसे नहीं डरा; किन्तु केवल वह प्रथम तो राजा पुरुकी वीरतासे अति मोहित हुआ और पुनः मगध सम्राट्के सेना बलको सुनकर ही स्वराज्यमें लौट गया। प्राचीन आर्यजातिकी अद्भुत अस्त्रविद्या, वीरत्व और व्यूहरचना आदि युद्ध कौशल कितनी उन्नतिको धारण किये हुए थे, उसका प्रमाण संस्कृतके प्राचीन इतिहासके पाठ करनेसे भली भाँति अनुभव हो सकता है। प्राचीन धनुर्वेदमें जिस प्रकार अद्भुत अस्त्रशस्त्रके वर्णन देखनेमें आते हैं, उनका प्रयोग करना तो दूरकी बात है, उनके रहस्योंको समझना और उनपर विश्वास करना भी आजकल कठिन हो गया है। नाग-पाश, शक्तिशेल, सम्मोहन, अग्निबाण, वारुणास्त्र आदिमें वैद्युतिक शक्ति तथा दैवीशक्तिका सञ्चार करके उनके द्वारा मूर्च्छा आदि किस प्रकार उत्पन्न किया करते थे सो आर्यजाति आजकल भूल गई है और पाश्चात्य जातियोंने भी आज तक उनका रहस्यभेद नहीं पाया है। विलसन् साहबने कहा है कि, "बाण निक्षेप विद्यामें प्राचीन आर्यजाति अद्वितीय थी।" एकदम कई बाण निक्षेप करना,

निक्षिप्त बाणको लौटा लाना, बाणकी कई प्रकारकी वैद्युतिक शक्तिके द्वारा शत्रुका कभी मूर्च्छित, कभी मुग्ध, कभी दग्ध, आदि कर देना यह सब प्राचीन आर्यजातिमें युद्ध-विद्याकी पूर्णताका लक्षण था। द्रौपदीके स्वयम्बरमें अर्जुनकी बाणविद्या, कुरुक्षेत्रके युद्धमें भीष्म, द्रोण और कर्णकी अद्भुत अस्त्रचालन विद्या, राम रावणके युद्धमें राम रावण और मेघ-नादकी विचित्र रहस्यमय शक्ति शेल, सम्मोहन, वारुणास्त्र, पाशुपतास्त्र, गारुड़ास्त्र, नागपाशास्त्र आदि अस्त्रविद्याएँ संसार-में अतुलनीय और आधुनिक जगत्में स्वप्नस्मृतिवत् हो रही हैं। परन्तु प्राचीन आर्यजातिमें येही विद्याएँ पराकाष्ठा तक पहुँच गई थीं। तलवारके चलानेमें आर्यजाति जिस प्रकार निपुण थी वैसी कोई भी जाति संसारमें निपुण नहीं थी। प्रसिद्ध टेसिया साहबने भारतवर्षीय तलवारको समस्त संसारके शस्त्रोंसे अच्छा कहा है। मुसलमान लोग राजपूत वीरोंकी तलवारसे इतना डरते थे कि, उनके ग्रन्थोंके पत्र पत्रमें इसका इतिहास मिलता है। हण्टर साहबने कहा है:—"सैन्यचालना, सैन्यसन्निवेश, सैन्योंका विविध व्यूहोंके रूपसे युद्ध क्षेत्रमें संरक्षण, व्यूहरचना आदि युद्धविद्याका वर्णन महाभारतमें अनेक स्थानोंमें पाया जाता है, जिससे सिद्ध होता है कि, प्राचीन आर्य्यजातिमें इस विद्याकी कोई भी कमी नहीं थी।" उनके सैन्यसन्निवेशकी प्रक्रिया, उरस, कक्षा, पक्ष, प्रतिग्रह, कोटी, मध्य, पृष्ठ आदि रूपसे विभक्त थी। उनकी व्यूहरचनामें जो अद्भुत कौशल था

सो आजकलके क्या पाश्चात्य क्या एतद्देशीय कोई भी नहीं जानते हैं। कुछ व्यूहोंके नाम उनके आक्रमणके अनुसार हुआ करते थे। यथा मध्यभेदी, अन्तर्भेदी इत्यादि। कोई व्यूह वस्तु-सादृश्यके अनुसार हुआ करते थे। यथाः—मकरव्यूह, श्येन-व्यूह, शकटव्यूह, अर्द्धचन्द्र, सर्वतोभद्र, गोमूत्रिका, दण्ड, मण्डल, असंहत इत्यादि। कुरुक्षेत्रके युद्धका महाभारतमें वर्णन है कि, युधिष्ठिर अर्जुनको (मेसिडोनियन व्यूहकी तरह) सूची मुख व्यूह निर्माण करनेको कह रहे हैं और अर्जुन वज्र व्यूह रचना ठीक होगी ऐसी प्रार्थना कर रहे हैं और इसी कारण अपनी रक्षाके लिये दुर्योधन अभेद्यव्यूहकी आज्ञा कर रहे हैं। इन वर्णनोंसे ज्ञात होता है कि, प्राचीन कालमें आर्य-जातिने युद्ध विद्यामें पूर्ण उन्नति प्राप्त की थी। किसी किसी अर्वाचीन पुरुषका यह सन्देह है कि, जब आर्यजाति बन्दूक और तोपका व्यवहार नहीं जानती थी, तब उनमें युद्ध विद्याकी उन्नति कैसे हो सकती है? परन्तु आर्यजातिके प्राचीन इतिहास पर दृष्टिपात करनेसे उनका यह सन्देह मिथ्या प्रमाणित हो जायगा। जब प्राचीन भारतके अनन्त अस्त्र शस्त्रोंमें नालास्त्र और शतघ्नी आदिका वर्णन देखते हैं और बड़े बड़े युद्धोंमें उन सब अस्त्रोंका प्रयोग भी देखते हैं, तो प्राचीन आर्यजातिकी युद्धविद्याके विषयमें इस प्रकारका संदेह करना सर्वथा निर्मूल है। आर्यजातिके प्राचीन ग्रन्थोंके देखनेसे प्रमाणित होता है कि, वे तोपको शतघ्नी, बन्दूकको नालास्त्र, बारूदको उर्व्वाग्नि और

गोलाको गुड़क कहा करते थे। बारूद उर्व्व नामक ऋषि द्वारा आविष्कृत होनेसे उसका नाम उर्व्वग्नी था। यद्यपि इन शब्दों-का व्यवहार अन्य प्रकारके अर्थोंमें भी पाया जाता है, तथापि अनेक स्थानोंमें इन चारों शब्दोंका व्यवहार तोप, बन्दूक, गोला और बारूदके लिये ही हुआ है। इस प्रकारके युद्ध यन्त्र आर्य्य जातिके युद्धमें व्यवहृत होते थे इसमें सन्देह नहीं।

उर्व्वग्नीं प्रोथितां कृत्वा शताग्नीं गुडकैर्युताम्।

बारूद और गोलेसे भरकर युद्धमें तोप चलाई गई। इन सब प्रमाणोंसे प्राचीन कालमें बन्दूक, तोप आदि अस्त्र व्यवहृत होते थे, यह सिद्ध होता है। सम्राट् पृथ्वीराजके समयमें भी तोपोंका व्यवहार था इसका प्रमाण उनके जीवनचरित्रके इति-हासमें पाया जाता है, यथाः—

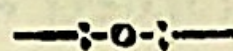
जंबूर तोप छुटहि झनंकि।
दशकोश जाय गोला भनंकि॥

जम्बूर और तोप झंझनाती हुई छूटीं और उनका गोला शब्द करता हुआ दस कोस तक पहुँचा। प्रसिद्ध गङ्गाकी नहर खोदते समय सर आर्थर कट्लि साहबने उत्तर पश्चिम प्रदेशमें पृथ्वीमध्यस्थित एक बृहत् नगरका ध्वंसावशेष पाया था और उसमें कई एक तोपें भी मिली थीं, जिससे उक्त साहबने यह सिद्धान्त निश्चय किया कि, प्राचीन भारतवासिगण तोपका व्यवहार जानते थे। प्रोफेसर विल्सन साहबने कहा है कि

"हिन्दुओंके चिकित्साशास्त्रके पाठ करनेसे पता लगता है कि, वे बारूद प्रस्तुत करना जानते थे और उनके ग्रन्थोंमें भी इसके प्रयोगका वृत्तान्त बहुधा मिलता है।" मैफी साहबने कहा है कि "भारतवासिगण पुर्तगीज् लोगोंकी अपेक्षा तोप आदि आग्नेय अस्त्रोंका प्रयोग विशेष जानते थे।" ग्रीस देशके थेमिसट्यिसने तथा महावीर अलेक्जण्डरने एरिस्टटल्को पत्र लिखते समय लिखा है कि उनकी सेनाओंके ऊपर हिन्दुओंने भीषण तोपोंके गोलोंका वर्षण किया था। शास्त्रोंमें शतघ्नी-का ऐसा वर्णन मिलता है कि, यह आग्नेयास्त्र लोहेसे बनता है, उसका आकार बड़े वृक्षके स्कन्धकी तरह होता है। यह दुर्गके ऊपर चढ़ाया जाता है और युद्धक्षेत्रमें भी लाया जाता है। इसका शब्द वज्रकी तरह होता है। इन सब वर्णनोंसे प्राचीन कालमें तोपका व्यवहार होना प्रमाणित होता है। इण्डियन् गवर्नमेण्टके फारेन् सेक्रेटरी ईलियट साहबने भारतीय आग्नेयास्त्रोंके विषयमें चर्चा करते समय कहा है कि "साल्टपिटर जो कि बारूदका एक प्रधान मसाला है और गन्धक जो कि उसके साथ मिलाया जाता है दोनों ही भारतवर्षमें बहुत मिलते हैं और मेरा यह सिद्धान्त है कि, प्राचीनकालमें भारतवासीगण इस प्रकार बारूद और तोपका व्यवहार जानते थे। उनके मकान और फाटक के सामने ऐसी चीजें रक्खी जाती थीं और उनमें दूर से आग लगाई जाती थी। इसके सिवाय आग लगने पर फट जाने वाले भी अनेक अस्त्रोंका हिन्दुलोग प्रयोग करते

थे।" इत्यादि अनेक प्रमाणोंसे प्राचीन कालमें तोपोंका व्यवहार और मुसलमान राज्यके समय भी कहीं कहीं तोपोंका व्यवहार सिद्ध होता है। अस्त्र युद्धके सिवाय जल-युद्ध और आकाश युद्धमें भी प्राचीन आर्य्यगण विशेष निपुण थे, इसका प्रमाण शास्त्रोंसे मिलता है। ऋग्वेदके प्रथम मण्डलके ११६ सूक्तमें वर्णन है कि, राजर्षि तुग्रने अपने पुत्र भुज्युको ससैन्य समुद्र-पथमें दिग्विजय करनेके लिये भेज दिया था। इससे प्राचीन कालमें जलयुद्धका भी निश्चय हुआ। कर्नैल टाड और स्ट्राबो साहबने कई स्थानोंमें कहा है कि, प्राचीन कालमें आर्य्यगण जलयुद्धमें विशेष निपुण थे; क्योंकि समस्त संसारव्यापी वाणिज्यओंकी रक्षाके लिये उनको सदा ही जल सैन्य, अर्णवपोत आदि रखने पड़ते थे। फरिया साउजाने कहा है कि "खिष्टीय १५०० शताब्दीमें एक गुजराती जहाजने पुर्तुगीजोंके प्रति अनेक तोपें चलाई थीं। १५०२ में हिन्दुओंने कलिकटके युद्धमें जहाजसे काम लिया और दूसरे वर्ष जामोरिन जहाजके द्वारा ३८० तोपें लाई गई थीं।" आकाशयुद्धके विषयमें प्राचीन इतिहासमें अनेक प्रमाण मिलते हैं। रावणका पुष्पक विमान पर चढ़कर दिग्विजय करना, इन्द्रजित्का आकाशमार्गसे रामचन्द्रकी सेनापर निरन्तर बाणवर्षण करना इत्यादि इत्यादि अनेक प्रमाणोंके द्वारा विमानविद्यामें प्राचीन आर्य्य जातिकी पारदर्शिता सिद्ध होती है। कुछ दिन पहले जब बेलून और एरोप्लेन आदि खेचरयन्त्रोंका आविष्कार नहीं हुआ था, तब

लोग हिन्दुओंके पुराणादि ग्रन्थोंमें आकाशयानोंका वर्णन देख कर हँसा करते थे, परन्तु भगवान्की कृपासे आज नवीन जेपलिन और एरोप्लेन आदिके आविष्कार द्वारा अर्वाचीन लोगोंका वह भ्रम दूर हो गया है और प्राचीन आर्य्यजाति किस प्रकार सूक्ष्म युद्धविद्यामें निपुण थी इसको सोचकर वे चकित हो रहे हैं। येही वर्णन प्राचीन आर्य्य जातिमें युद्ध-विद्याकी पूर्णताके परिचायक हैं।



अंकविद्याकी उन्नति ।

यह तो प्राचीन इतिहासवेत्ता यूरोपीय पण्डितगण स्वीकार ही करते हैं कि बीजगणित, दशमिक, सङ्ख्यानिर्णय, त्रिकोणमिति, ज्यामिति, रेखागणित, आदि अङ्कविज्ञानके आदिकर्ता भारतवर्षके महर्षिगण ही हैं। यूरोपीय अध्यापक प्रोफेसर प्लेफेअर (Professor Playfair) साहबने अपनी पुस्तकमें लिखा है कि, आर्य्यजातिका त्रिकोणमिति शास्त्र बहुत ही प्राचीन है, उनके सूर्य्यसिद्धान्त ग्रंथमें जिस प्रकार त्रिकोणमितिकी क्रियायें लिखी हैं। वे ग्रीसदेशवासी अध्यापकोंकी क्रियाओंसे बहुत ही श्रेष्ठ हैं। इन साहबने और भी लिखा है कि जिस प्रकार भारतवासियोंकी त्रिकोणमिति है वैसी विद्या यूरोपके पण्डितगण षोड़श शताब्दीके पहिले नहीं जानते थे। परन्तु भारतवर्षमें यह विद्या बहुत कालसे चली आ रही थी। उन्होंने

और भी लिखा है कि सूर्य्यसिद्धान्त ग्रन्थ रचित होनेसे पहिले ज्यामिति अर्थात् रेखागणित शास्त्र भारतवासिगण सम्पूर्ण जानते थे। गणित तत्त्वका पूर्ण प्रमाण ब्रह्मगुप्त आदि आचार्यों- के ग्रन्थोंमें भली भांति पाया जाता है; उन प्राचीन ग्रन्थोंको देखकर यूरोपवासिगण यह एक मत हो कर स्वीकार करते हैं कि, दशमिक संख्याका आविष्कार भारतसे ही हुआ है। आर्य्यभट्ट आदि आचार्यौंके ग्रंथोंसें वीजगणितकी उन्नतिका पूर्ण प्रमाण पाया जाता है; पुनः डीओ फेण्टस नामक ग्रीसदेशीय पण्डित, जो कि गत २२६० वर्षौंके लग भग वर्त्तमान थे, उनके पुस्तकके देखनेसे प्रमाणित होता है कि, उन्होंने इन्हीं भारतीय आचार्य्यों- के ग्रन्थोंकी सहायतासे ही अपनी विद्याकी ऐसी उन्नति की थी। इतिहासोंमें प्रमाण है कि, खालिफ आलमानसर हारुन- अलरसीद नामक आरवीय सम्राट् जो कि गत १२०० वर्षौंके लगभग वर्त्तमान थे, उनके समयमें मुसलमान पण्डित महम्मद बिनमूसा आदिके द्वारा वीजगणित आदि गणितशास्त्र अरबी भाषामें अनूदित हुए थे। पुनः और भी प्रमाण है कि, मुसलमान सम्राटोंने जब स्पेन और पोर्तुगाल आदि यूरोपीय देशोंमें अपना अधिकार जमाया था, उस समय उन्होंने भारतीय नाना विद्या सिखानेके अर्थ अपने राज्यमें एक बड़ी पाठशाला खोली थी। और भी इतिहासोंमें कई एक स्थानोंमें प्रमाण है कि, ग्रीक राज्यके और अरब राज्यके कई एक विद्वान्‌गण अपने अपने समय पर अपने राजाओंकी सहायता लेकर भारत भूमिमें

गणित और ज्योतिष विद्या सीखनेको आये थे; और पुनः सीखकर अपने अपने देशोंमें उनका प्रचार किया था। जब ग्रीस देशका प्राचीन इतिहासग्रन्थ और अरव देशीय इतिहास ग्रन्थ देखनेसे यही प्रमाणित होता है कि, विद्योन्नतिके समय वहाँके पण्डितोंने प्रथम भारतवर्षकी शिष्यता स्वीकार करके बीजगणित, त्रिकोणमिति, रेखागणित तथा और और नाना प्रकारके गणितशास्त्र अध्ययन द्वारा अपने अपने राज्योंमें उनका विस्तार किया था; पुनः जब यह भी देखते हैं कि, इन विद्याओंका विस्तार यूरोपमें उन दोनों जातियों द्वारा ही प्रथम हुआ था, तब यह मानना ही पड़ेगा कि, जगत्में भारतवर्ष ही इन गणित विद्याओंका आदि गुरु है।

प्रोफेसर (१) मैकडोनल साहवने कहा है "अङ्कशास्त्रके लिये भी यूरोपियन जाति आर्यजातिके पास ऋणी है। क्योंकि समस्त पृथ्वीमें जिन जिन आकारोंके अङ्क लिखे जाते हैं, उनके आदि आविष्कर्ता भारतवासी ही हैं। दसमिक संख्या भी इन्हींका आविष्कार है। अष्टम तथा नवम शताब्दीमें आर्यगण अङ्कगणित तथा बीजगणित शिक्षाके लिये अरव देशवासियोंके गुरु बने थे और इन्हींके द्वारा यह विद्या पश्चिम देशमें फैली है।" (२) मनियर विलियम साहवने कहा है, "ज्यामिति और बीजगणितका आविष्कार तथा गणित ज्योतिषके साथ उसका सम्बन्ध स्थापन हिन्दुओंके द्वारा ही सबसे पहिले हुआ था और उन्होंसे यह विद्या पहले अरबमें और पश्चात् यूरोपमें

फैली है। इन सब प्रमाणोंसे तथा पश्चिमी विद्वानोंके वचनों द्वारा यह सिद्ध होता है कि, अङ्कविद्याके जितने प्रधान प्रधान भेद हैं, उनके सबसे प्रथम आविष्कार करनेवाले भारतवासी ही हैं।

तडित्‌विज्ञान और योगशक्ति।

ऋषिकालमें तडित्‌विज्ञान और योगविज्ञानकी जितनी उन्नति हुई थी, वह आज कलके लोग यदि विचार करने लगें तो तन्द्रावस्थामें स्वप्नकी नाईं अनुभव होने लगता है; उन्नतिशील पश्चिमी विद्वान् उसको यदि च स्वीकार करते जाते हैं, तथापि कारण अन्वेषण करते समय अब भी मोहित हुआ करते हैं। प्राचीन आर्य्यजातिके भोजनमें, शयनमें, बैठनेमें, चलनेमें, जलमें, स्थलमें और धर्म्म, अर्थ, काम, मोक्षकारक सब कर्म्मोंमें ही तडित्‌विज्ञानका अद्भुत संबंध देख पड़ता है। महाबली रावणने जो दुर्जय शक्तिशेलद्वारा सुमित्रानन्दनको जड़की नाईं कर दिया था, सो तडित्‌विज्ञानकी उन्नतिका ही प्रमाण है। बाणोंमें विद्युत्‌शक्ति डालनेकी क्रिया अभी तक यूरोपके विद्वान् आविष्कार नहीं कर सके हैं; नागपाश, शक्तिशेल, सम्मोहन अस्त्र आदि जितने अद्भुत शक्तियुक्त अस्त्र आर्य्यगण युद्धार्थ बनाया करते थे, वे सब तडित्‌विज्ञानकी सहायतासे ही निर्माण करते थे। देवमन्दिरके ऊपर अष्टधातुका चक्र अथवा त्रिशूल आदि

लगानेको जो विधि है, वह विद्युत्विज्ञानकी उन्नतिका ही चिन्ह है। उत्तरकी ओर सिर करके न सोना, नवीन अपक्व फलकी ओर उंगली न उठाना, नीच जातिका स्पृष्ट अन्न भोजन न करना, चैल, अजिन, कुश और कम्बलके आसन पर बैठ कर उपासना करना, सौभाग्यवती स्त्रियोंको स्वर्णमय अलङ्कार आदि धारण करनेकी आज्ञा देना और विधवाओंको न देना आदि सब नियम ही इस तड़ित्विज्ञान-उन्नतिके प्रमाण हैं। आजकलकी विज्ञान दृष्टिसे यह प्रमाणित ही हो चुका है कि, अष्टधात वज्रपातको निवारण करता है। इस कारण मन्दिरों पर वह स्थापन किया जाता है; उसी प्रकार उत्तर सिर होकर सोनेसे कुस्वप्न देखनेकी सम्भावना है; क्योंकि पृथ्वीका स्वाभाविक तड़ित्प्रवाह दक्षिणसे उत्तरकी ओर प्रवाहित होता है, इस कारण उस रीति पर सोनेसे रक्तकी गति पदकी ओरसे मस्तककी ओर अधिक रूपसे हो सकती है। इसी कारण शारीरिक तडित् द्वारा अपक्वफल तब ही दूषित हो जायगा जब उसकी ओर उँगली उठाई जायगी। इसी कारण नीच जातिमें तमोगुण अधिकहोनेसे उसका छुआ हुआ अन्न भी उसकी दूषित तडित्द्वारा दोषयुक्त हो जाने पर श्रेष्ठ तडित् युक्तब्राह्मण देहके लिये अहितकारी ही है। पृथ्वी सदा जीव शरीरान्तर्गत तडित्को खींचा करती है। उपासना करते समय मनुष्यशरीरमें सात्विक तडित्का बढ़ना सम्भव है; परन्तु पृथ्वीपर बैठकर उपासना करते समय वह तडित्संग्रह पृथिवीद्वारा नाशका

प्राप्त हो सकता है, किंतु चैत्र, अजिन, कुश और कम्बलमें तडितग्रहण करनेकी शक्ति नहीं है, वे Non-conductor हैं। इस कारण उनपर बैठकर साधन करनेसे क्षति नहीं होगी। सुवर्ण आदि धातु तडितशक्तिको बढ़ाते हैं, तडितशक्तिकी वृद्धिसे शारीरिक इन्द्रियोंकी शक्तिकी वृद्धि होती है। इन्द्रियोंमें विशेष शक्ति होनेसे स्त्रियाँ सुसंतान उत्पन्न कर सक्ती हैं; इस कारण ही आर्य्य सदाचारमें सधवा स्त्रियोंको धातुमय और रत्नमय अलंकार धारण करनेकी और विधवा स्त्रियोंको अलंकार धारण न करनेकी आज्ञा दी गई है। तडित्विज्ञानपूर्ण इन आचारोंको सुनकर साधारण बुद्धियुक्त मनुष्य भी समझ सक्ते हैं कि, प्राचीन आर्य्योंने इस सूक्ष्म विज्ञानको किस उन्नत अवस्थामें पहुँचा दिया था। यद्यपि नवीन यूरोप इस समय तड़ित् (electricity) के प्रकट करनेकी शैलीके अनेक भेद प्राप्त कर चुका है, पदार्थ विद्या अर्थात् सायन्सकी उन्नतिके साथ ही साथ तड़ित् प्रकट करना और उससे अनेक प्रकारका काम लेना पश्चिमी विद्वान् जान गये हैं, परन्तु अभीतक वे समझ नहीं सके हैं कि, तड़ित् क्या पदार्थ है। पश्चिमी सायन्सवेत्ता विद्वान् कोई भी इस प्रश्नका उत्तर नहीं दे सकता कि, तड़ित् क्या वस्तु है, परन्तु हमारे आर्यशास्त्रमें इस प्रकारकी शक्तियोंके विषयमें अनेक वर्णन पाये जाते हैं।

योगविज्ञानकी मुक्ति देनेवाली जो शक्ति है, सो तो विलक्षण ही है, परन्तु इस विज्ञानकी भौतिक शक्तियोंकी अद्भुतता

अत्र जगत्में प्रसिद्ध ही हो रही है। योगशक्ति द्वारा मेघ वायु आदिका स्तम्भन करना, शून्यमार्गसे विचरण करना, शरीरको लघु अथवा भारी कर लेना, प्रस्तर अथवा मृत्तिका आदि पदार्थमें प्रवेश करना, दूरस्थित विषयको सुनना अथवा देखना, दीर्घ आयु और इच्छामृत्युका होना, क्षुधा पिपासाका जय करना आदि नाना विभूतियोंकी प्राप्ति हो सकती है। इस प्रकारकी शक्ति जीवमें कैसे प्राप्त हो जाती है, उसका प्रमाण वेद और नाना योग सम्बन्धीय शास्त्र दे रहे हैं। डाक्टर पाल (Dr. Paul.) साहबने अपने योगविज्ञान नामक पुस्तकमें वैज्ञानिक युक्ति द्वारा पूर्ण रूपसे प्रमाणित कर दिखाया है कि, प्राणायाम साधन द्वारा किस प्रकारसे योगी दीर्घायु लाभ कर सकते हैं; इस प्रकारसे उक्त पश्चिमी पण्डित महाशयने अष्टाङ्ग योगकी बहुत ही प्रशंसा करके योगके आठों अङ्गोंकी योग्यता और अद्भुत अलौकिक शक्तियोंका वर्णन अपनी पुस्तकमें किया है। प्रत्यक्ष प्रमाणमें सन्देह हो ही नहीं सकता। जब यूरोपवासी विद्वानोंने प्रत्यक्ष दृष्टिसे पञ्जाबकेसरी महाराजा रणजीतसिंहकी सभामें योगीवर हरिदास स्वामीको छःमास तक पृथ्वीके भीतर जड़ समाधि अवस्थामें रहते हुए देखा, जब उन्होंने देखा कि एक जीवित मनुष्यको पृथ्वी खनन करके गाड़ दिया गया और उसके ऊपरकी मृत्तिकापर जव बो कर पहरे बिठा दिये गये, पुनः जब उनको छः महीने पूरे होनेपर निकाला गया तो वे जीवित ही मिले; तब उन विद्वानोंके हृदय-

में और कहाँसे सन्देह रहेगा ? वे विद्वान् उसी प्रकार मद्रासके योगीको कुम्भकद्वारा आकाशमें स्थित देखकर और कलकत्तेके भूकैलासस्थित योगीको श्वासरहित समाधि अवस्थामें देखकर अतीव मोहित हुए। इन तीनों उदाहरणोंको प्रमाण रूपसे उन्होंने अपनी अपनी पुस्तकोंमें भी लिखा है। यदि च उन्होंने प्रत्यक्ष भी कर लिया है तत्र च योगशक्तिका कारण अभी तक वे अन्वेषण नहीं कर सके हैं। कुछ आशाजनक लक्षण अब अमेरिका और यूरोपमें प्रकट हुए हैं। वहाँ टेलिपेथी (Telepathy) और थाट रीडिङ्ग (Thought Reading) आदि नवीन विद्याओंके आविष्कारके साथ ही साथ भारतवर्षके अलौकिक योगविज्ञानका कुछ कुछ छायाके समान स्वरूप वे देखने लगे हैं। और आर्योंके योगशास्त्र और उसकी क्रियाके विषयमें अब सन्देहरहित होने लगे हैं।

ज्योतिःशास्त्रोन्नति ।

गणितज्योतिष और फलितज्योतिष इन दोनों शास्त्रोंका आविष्कार आदि कालमें इस भारतभूमिमें ही हुआ है। केवल विद्याओंका आविष्कार ही नहीं हुआ किन्तु उनके प्रत्येक विभाग इतनी उन्नतिको पहुँचे थे कि, जिन सब विभागोंको अभीतक पश्चिमी वैज्ञानिकगण समझ ही नहीं सके हैं। यद्यपि उन्होंने आजकल यन्त्रोंकी सहायतासे गणित ज्योतिषकी कुछ

उन्नति की है, तथापि फलितकी सूक्ष्मताको वे अभीतक पा ही नहीं सके हैं। प्राचीन कालमें ज्योतिःशास्त्रकी पूर्ण उन्नति नहीं हुई थी, ऐसा कोई कोई एक देशदर्शी पण्डित कह दिया करते हैं, परन्तु आर्य्यशास्त्रके न देखनेसे ही वे ऐसा कहा करते हैं। ग्रह, नक्षत्र, राशिचक्र, राशिभेद, क्रान्ति, सुमेरु, कुमेरु, छायापथ, उपग्रह, कक्ष, धूमकेतु, माध्याकर्षणशक्ति, सूर्य, महासूर्य आदि भेद, पृथिवी आदिकी आकृति, ग्रहणनिर्णय आदि सकल गंभीर विषयोंके सिद्धांत जब प्राचीन आर्योंके ग्रन्थोंमें देखे जाते हैं, तब कैसे कहा जा सकता है कि, प्राचीन कालमें आर्यों-ने इस शास्त्रकी पूर्ण उन्नति नहीं की थी। वेबर साहबने ज्योतिः शास्त्रकी प्राचीनताके विषयमें कहा है कि "यह शास्त्र भारतवर्ष-में खृष्ट जन्मके २७८० वर्ष पहले भी प्रचलित था।" काउन्ट जोर्णस् जार्ना साहबने कहा है कि "कलियुगके प्रारम्भसे ही अर्थात् पाँच हजार वर्षोंके पहलेसे ही आर्य्यजातिके भीतर ज्योतिःशास्त्रका प्रचार था।" प्रोफेसर विलसन साहबने कहा है "आर्यजातिने ज्योतिर्विद्यामें अलौकिक उन्नति की थी। द्वादश-राशिका निर्णय, ग्रहोंकी गति, पृथिवीका शून्यमें भ्रमण, चन्द्र-गति, पृथ्वी और चन्द्रका दूरत्व निर्णय, चन्द्र सूर्य ग्रहणका काल-निर्णय आदि सभी बातें प्राचीन आर्यजातिकी ज्योतिर्विद्यामें पूर्णताको ही प्रमाणित करती हैं।" विष्णुपुराणमें लिखा है:—

स्थालीस्थमग्निसंयोगादुद्रेकि सलिलं यथा।
तथेन्दुवृद्धौ सलिलमम्भोधौ मुनिसत्तमः॥

न न्यूना नाऽतिरिक्ताश्च वर्द्धन्त्यापो ह्रसन्ति च ।
उदयास्तमनेष्विन्दोः पक्षयोः शुक्लकृष्णयोः ॥
दशोत्तराणि पञ्चैव अंगुलानां शतानि वै ।
अपां वृद्धिक्षयौ दृष्टौ सामुद्रीणां महामुने ॥

ज्वार भाटासे यथार्थमें समुद्रका जल ह्रास और वृद्धिको प्राप्त नहीं होता; किन्तु पात्रमें जल रखकर उसे अग्निपर चढ़ाने-से जैसे अग्नि-उत्तापद्वारा उफान आकर वह वृद्धिको प्राप्त हो जाता है, वैसे ही शुक्ल और कृष्ण पक्षकी चन्द्रकला द्वारा आकृष्ट होकर समुद्रजल ह्रास वृद्धिको प्राप्त हुआ करता है। आर्य्यग्रन्थोंमें ऐसे प्रमाण देखनेसे किसको विश्वास न होगा कि, आर्य्यगणको ग्रहआकर्षण शक्ति और ज्वार भाटाका कारण ज्ञात था। वार और तिथि आदि आर्य्य महर्षिगणने ही प्रथम आविष्कार करके समयकी शृंखला की थी। सालभरमें जिस दिन दिवा रात्रि समान होते हैं, वह दिन, यूरोपीय पण्डित टोलेमी (Tolemuy)—जिसको यूरोपीयनजाति इस नियमके आविष्कर्त्ता मानती है—उसके जन्म लेनेसे वहुत काल पूर्व ही प्राचीन आर्य्य आचार्य्यगण द्वारा निरूपित हो चुका था। सूर्य्यसिद्धान्त ग्रन्थमें लेख हैः—

सर्वतः पर्वतारामग्रामचैत्यचयैश्चितः ।
कदम्बकेशरग्रन्थिकेशरः प्रसवैरिव ॥

कदम्ब जिस प्रकार केशरसमूह द्वारा वेष्टित होता है, उसी

प्रकार पृथिवी भी ग्राम, वृक्ष, पर्वत आदि द्वारा वेष्टित है । नक्षत्र कल्पमें लिखा है:—

कपित्थफलवद्विश्वं दक्षिणोत्तरयोः समम् ।

कपित्थ फलकी तरह पृथिवी गोलाकार है, परन्तु केवल उत्तर और दक्षिणमें कुछ समान अर्थात् दबी हुई है। जब पश्चिमी विद्वान् पृथिवीकी नारंगीके साथ उपमा देते हैं, तब आर्यगणको कदम्ब और कपित्थके साथ उपमा देते देख क्या विद्वान्गण नहीं समझ सकेंगे कि, प्राचीन आर्यगण पृथिवीके स्वरूपको पश्चिमी वैज्ञानिकगणसे पूर्व ही भली भाँति जानते थे। आज कल विद्यार्थियोंको शिक्षाके अर्थ गोलक (globe) प्रस्तुत किया जाता है; परन्तु जब प्राचीन आर्य्य ग्रन्थों में देखते हैं कि, वे भी शिष्योंको काष्ठकी खगोल और भूगोल रचना द्वारा शिक्षा दिया करते थे, तब कौन बुद्धिमान् नहीं विश्वास करेंगे कि वे भी इस नवीन रीतिको भली भाँति जानते थे। आजकलकी शिक्षामें प्रधान दोष यह है कि, भारतवासी पूर्ण शिक्षाको प्राप्त नहीं करते। पश्चिमी अंगरेजी भाषा या संस्कृत विद्या, चाहे किसीमें वे परिश्रम क्यों न करते हों उसमें पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं करते। द्वितीयतः अपने वर्त्तमान भ्रमोंके दूर करनेके अर्थ दोनों शास्त्रोंका भली भाँति संग्रह करके तत्पश्चात् दोनोंके गुणोंका विचारकर सत्यका अन्वेषण करें, तो उसका अनुसंधान पा सकेंगे; नहीं तो एक विद्याको ही

असम्पूर्ण जानकर सत्य अनुसंधान करना वृथा श्रममात्र है इसमें सन्देह नहीं॥ आर्य्यभट्ट जीने लिखा है:—

चला पृथ्वी स्थिरा भाति।

पृथिवी चलती है परन्तु॥ ठहरी हुई जान पड़ती है। पुनः आर्य ग्रन्थोंमें लेख है:—

भपंजरः स्थिरो भूरेवावृत्यावृत्य प्रातिदिवसिकौ

उदयास्तमयौ सम्पादयति नक्षत्रग्रहाणाम्।

नक्षत्रमंडल और राशिचक्र स्थिर हो रहे हैं परन्तु पृथिवी वारंवार घूमती हुई ग्रह नक्षत्रोंका दैनिक उदय अस्त सम्पादन किया करती है। इन लेखोंको देखनेसे कौन नहीं विश्वास करेगा कि, प्राचीन आर्य्यगण पृथिवीकी गतिको जानते थे। जब आचार्य्योंके ग्रन्थोंमें देखते हैं:—

भूगोलो व्योम्नि तिष्ठति।

पृथिवी शून्यमें ही स्थित है, पुनः जब भास्कराचार्य्यको कहते हुए देखते हैं:—

नान्या-धारं स्वशक्त्या वियति च नियतं तिष्ठतीहास्य पृष्ठे।

निष्ठं विश्वं च शश्वत् सदनुजमनुजादित्यदैत्यं समंतात्॥

पृथिवी बिना आधारके ही अपनी शक्तिद्वारा आकाशमण्डलमें स्थित है और उसके पृष्ठ पर चारों ओर देव दानव मानव आदि निवास कर रहे हैं; तब कैसे विश्वास नहीं करेंगे कि, आर्यगण पृथिवीकी स्थितिको भली भाँति जानते थे। जब ब्रह्मपुराणमें देखते हैं:—

पर्वकाले तु सम्प्राप्ते चन्द्रार्कौ छादयिष्यसि।
भूमिच्छायागतश्चन्द्रं चन्द्रगोऽर्कं कदाचन॥

पूर्णिमा आदि पर्व्व दिनोंमें तुम चन्द्र सूर्यको आच्छादन करोगे; कभी पृथिवीकी छायारूपसे चन्द्रको और कभी चन्द्रकी छायारूपसे सूर्यको अच्छादित करोगे; पुनः ज्यौतिषाचार्य्योंके ग्रन्थोंमें देखते हैं :—

छादको भास्करस्येन्दुरधःस्थो घनवद्भवेत्।
भूच्छायां प्राङ्मुखश्चन्द्रो विशत्यर्थो भवेदसौ॥

मेघके समान चन्द्र, सूर्य्यके अधःस्थ होकर सूर्य्यको आच्छादित करता है और चन्द्र भूच्छायामें प्रवेश करता है, तब कौन बुद्धिमान् नहीं जान सकते हैं कि, प्राचीन भारतवासी ग्रहण-विज्ञानको भली भाँति जानते थे। इस प्रकारसे ज्योतिःशास्त्रकी उन्नतिके विषयमें जितना विचार करेंगे, उतना ही सिद्धान्त दृढ़ होता जायगा कि, इस गंभीर विज्ञानशास्त्रमें प्राचीन भारतने बहुत ही उन्नति की थी।

बिना गणितज्योतिषके फलितज्योतिष कार्य्यकारी नहीं होता, इस कारण भारतका फलितशास्त्र ही गणितशास्त्रकी उन्नतिका प्रमाण है। आजकलके यूरोपीय सम्वादोंका पाठ करनेसे बुद्धिमान् मात्र ही जान सकेंगे कि आज दिन यूरोप-वासी किस प्रकारसे मिटेओरोलोजी (Meteorology) विद्यापरसे अपनी दृष्टि हटाकर फलितज्योतिषकी सत्यताकी ओर झुकते जाते हैं। आज यूरोपका यह फलितज्योतिषका

पक्षपात ही हमारे इस गणित एवं फलित ज्योतिष विषयक सिद्धान्तको पूर्णरूपसे दृढ़ कर रहा है।

पदार्थविद्याका प्राचीनत्व।

पश्चिमी विद्वान्गण यह कहते हैं कि पदार्थविद्या अर्थात् सायन्सकी उन्नति प्राचीन भारतमें नहीं थी, क्योंकि माध्याकर्षण शक्तिका आविष्कार करनेवाले न्यूटन (Newton) साहब हैं; परन्तु जब देखते हैं कि भास्कराचार्य्यजीने लिखा है:—

आकृष्टशक्तिश्च मही तया यत् खस्थो गुरुः स्वाभिमुखं स्वशक्त्या।
आकृष्यते तत् पततीति भाति समे समंतात् क्व पतत्वियं खे॥

पृथिवीमें आकर्षणशक्ति है; क्योंकि कोई भारी पदार्थ आकाशकी ओर उछालनेपर पृथिवी अपनी शक्ति द्वारा उसको आकर्षण कर लेती है; आकाश चारों ओर ही है, परन्तु वह पदार्थ पृथिवीके ऊपर ही गिरता है; पुनः जब देखते हैं कि आर्य्यभट्ट कह रहे हैं:—

आकृष्टशक्तिश्च मही यत्तया प्रक्षिप्यते तत्तया धार्य्यते।

पृथिवीमें आकर्षणशक्ति है; क्योंकि जो वस्तु फेंकी जाती है, आकर्षण शक्ति द्वारा पृथिवी उसको धारण कर लेती है; तब कैसे कहेंगे कि न्यूटन साहब इस सायन्सके आविष्कर्त्ता हैं; जब न्यूटन साहबके जन्मग्रहण करनेसे सहस्रों वर्ष पूर्व्वके

ग्रन्थोंमें उस विज्ञानका प्रमाण मिल रहा है, तब कैसे मानेंगे कि, वह नियम भारतसे नहीं निकला, यूरोपसे निकला है।

अभी थोड़े दिन हुए, यूरोपवासियोंने नाना यंत्रोंकी सहायतासे सूर्य्यकलंकका (Solar spots) अनुमान किया है और वे कहते हैं कि यह उनका नूतन आविष्कार है; परन्तु आर्य शास्त्रोंको देखनेसे अति सुगमता द्वारा ही यह भ्रम दूर हो सकता है। विष्णु और मार्कण्डेय आदि पुराणों और बराहमिहिर आदिकी ज्योतिष संहिताओंमें इसका विशेष विवरण पाया जाता है। पुराणोंमें लेख है कि, विश्वकर्माने जब अपने भ्रमी नामक यन्त्रका सूर्यमण्डलपर प्रयोग किया था तब उस अस्त्रका सूर्य्यमण्डलके जिस जिस अंशमें स्पर्श हुआ, वही वही अंश काला हो गया और उसी उसी अंशको सूर्य्य-कलंक कहते हैं। ग्रीक भाषाके ग्रंथ, रोमन भाषाके ग्रन्थ, अरबी भाषाके ग्रन्थ तथा नाना यूरोपीय भाषाओंके ग्रन्थोंसे जब यही सिद्ध होता है कि, प्राचीन आर्य्यजाति ही सकल मनुष्यजातियोंसे पहिले अपनी भारतभूमिमें शिल्प-नैपुण्य तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तोंकी प्रकाश करनेवाली थी, जब प्राचीन महर्षिगणके नाना ग्रन्थोंमें ज्योतिष विद्या, रसायन विद्या, भूत विद्या, चिकित्सा विद्या और योग आदि विद्याका वर्णन देखते हैं, तब निरपेक्ष विद्वान् मात्र ही स्वीकार करेंगे कि, प्राचीन भारत ही इस विद्याकी उन्नतिका आदि गुरु है।

ज्ञान-विज्ञान-उन्नतिके विषयमें प्राचीन आर्य्यजाति किस

प्रकार अलौकिक शक्तिसम्पन्न थीं सो प्राचीन इतिहास पाठ करनेसे विदित होता है। मृत पुरुषका पुनर्जीवन लाभ, जो कि आजकल कल्पनामें भी नहीं आ सकता—प्राचीन भारतके इतिहासमें देखनेमें आता है। दैत्यगुरु शुक्राचार्य्यने मृत संजीवनी विद्याके प्रभावसे रणाहत मृत दैत्योंको पुनर्जीवित किया था। अतिवृद्ध कङ्कालसार च्यवन ऋषिका नवयौवन लाभ इत्यादि सभी बातें प्राचीन अलौकिक ज्ञान-विज्ञानोन्नतिकी अपूर्व परिचायक हैं, जिसको निष्पक्ष-विचारशील पुरुष अवश्य ही स्वीकार करेंगे। जिस प्रकार पहाड़पर रहनेवाले किसी मनुष्यसे, जिसने कभी रेलगाड़ी नहीं देखी है, पृथ्वीपर घंटेमें ६० मील जानेवाली भी वस्तु हो सकती है ऐसा कहा जाय, तो वह हँसकर उड़ा देगा; परन्तु उसका ऐसा उड़ाना केवल अपना ही अज्ञान और मूर्खताका प्रकाश करना है, ठीक उसी प्रकार आज हमारी शक्ति नष्ट हो गई है, इसको न स्वीकार करके जो कुछ प्राचीन बातें हमारी समझमें नहीं आती, उन्हें गपोड़ा समझकर उड़ा देना, वृथा अहङ्कार, उन्माद और मूर्खताका परिचायकमात्र है। धीर और निष्पक्ष विचारशील पुरुष ऐसा कभी नहीं करते। ज्ञान समुद्र अनन्त है, उसका पूरा पता कौन लगा सकता है? आज पाश्चात्य जगत्में कितने ही नये सायन्सोंका आविष्कार हो रहा है। जिन बातोंको लोग पूर्ण असम्भव जानते थे वे ही आज सत्य हो रही हैं। इससे क्या यह सिद्धान्त नहीं निकलता कि जो लोग उन सब सायन्सों

के आविष्कारके पहिले उन्हें असम्भव कहा करते थे, वे सब भ्रान्त थे और यदि आजसे ४०० वर्षोंके बाद येही सब सायन्सोंके आविष्कार करनेवाले लोग मर जायँ, कोई भी ऐसे पुरुष जीते न रहें जिससे ये सायन्स ही नष्ट हो जायँ, तो इन ४०० वर्षोंके बाद जो लोग उत्पन्न होंगे वे भी क्या इन सब सायन्सकी बातोंको किसी पुस्तकमें देखकर गपोड़ा-पुराण नहीं समझेंगे? कालकी रहस्यमयी गतिको कौन जान सकता है? इसमें साहङ्कार स्पर्द्धाकी अपेक्षा धीर होकर ऐसे विषयों-को मानना और मनुष्यबुद्धिको परिच्छिन्न समझना ही सत्य और युक्तियुक्त है।

इञ्जिनियरिङ्ग (Engineering) पदार्थविद्या प्राचीन काल-में कितनी उन्नत हुई थी, रामेश्वरका सेतुबन्ध तथा उड़िसाके कनारक और भुवनेश्वर, पुरी आदिके मन्दिर इत्यादि इसके ज्वलन्त दृष्टान्त हैं। कनारकके मन्दिरके पत्थरोंका काम देखकर पश्चिमी इञ्जिनियर लोग अभीतक चकित होते हैं। उनको अभीतक यह समझमें नहीं आता है कि, ये पत्थर कहाँसे लाये गये, कैसे लाये गये और कैसे ऊपर चढ़ाये गये। मिनर-लजी (Minorology) अर्थात् खनिज पदार्थ विद्याकी उन्न-तिका प्रमाण तो स्पष्ट ही है। सोना, चाँदी आदि सब प्रकारके धातु और हीरा, पन्ना आदि सब प्रकारके रत्नोंका उत्तमतासे प्राप्त करना और उनका सद्व्यवहार करना भारतवासी ही जानते थे। और वेकटिरिओलजी (Bacteriology) अर्थात्

स्वेदज सम्बन्धी पदार्थविद्याकी तो भारतवर्षमें पराकाष्ठा ही होगई थी। अभीतक यूरोपने तो दस बीस तरहके स्वेदज जीव (Germ) का ही आविष्कार किया है। प्राचीनकालके आर्य आचार्योंने कहा है कि, स्वेदज जीव योनिकी संख्या ग्यारह लक्ष है। इसीसे यह प्रमाणित होता है कि, वे इस विद्यामें पाराङ्गत थे। तुलसीपत्रकी पवित्रता और रोगबीजनाशकारिता, गोबरकी पवित्रता और रोगबीजनाशकारिता इत्यादि हिन्दु सदाचारसे सम्बन्ध रखनेवाले पदार्थोंके गुणोंको देख यूरोपके पदार्थविद्या जाननेवाले विद्वान् चकित होते हैं और वे स्वीकार करते हैं कि, बिना इस विद्याके जाने प्राचीन हिन्दुगण ऐसे पदार्थोंका आदर कदापि नहीं कर सकते थे। गङ्गाजीकी पवित्रता और रोग दूर करनेकी शक्तिके विषयमें यूरोप जितना जानता जाता है उतना ही मोहित और चकित होता है। बेक्टिरिओलजी (Bacteriology) विद्याके प्रसिद्ध विद्वान् डा० हङ्किनस् (Dr Hankins) ने श्रीगङ्गाजीकी महिमाके विषय में जो कुछ अनुसन्धान किया है उसका साराँश नीचे दिया जाता है। उन्होंने यह प्रमाण पाया है कि, कैसे ही कठिन रोगके कीट क्यों न हों, वे छः घण्टोंके भीतर गङ्गाजलमें मर जाते हैं। जो रोगकीट कूप अथवा अन्य नदीके जलमें घण्टेके भीतर अगणित-रूपसे बढ़ जाते हैं गङ्गाजल स्पर्श करते ही वे मरने लगते हैं। यमुनाजलकी भी महिमा उन्होंने बताई है और यह स्वीकार किया है कि, इस सायन्सको हिन्दुओंने ऐसे समयपर

सीखकर पराकाष्ठाको पहुँचाया था कि, जिस समय यूरोप असभ्यताके अन्धकार में ही डूबा हुआ था। *

---

*Mark Twain speaking of some test, by Mr. Hankins the Scientist in Government employ at Agra in connection with the water of the Ganges, remarks in his 'More Tramps Abroad':—(Page 343-44).

"It had long been noted as a strange thing that while Benares is often afflicted with the Cholera she does not spread it beyond its borders. This could not be accounted for. Mr. Hankins, the Scientist in the employ of the Government at Agra concluded to examine the water. He went to Benares and made his tests. He got water at mouths of the sewers where they empty into the river at the bathing ghats; a cubic centimetre of it contained millions of Cholera germs; at the end of six hours they were *all dead.* He caught a floating cropse, towed it to the shore, and from beside it he dipped up water that was swarming with Cholera germs, at the end of six hours they were *all dead.*

"He added swarm after swarm of Cholera germs to this (Ganges) water; within six

हिन्दुस्थानके सुप्रसिद्ध पदार्थविद्याके जगत्प्रसिद्ध आचार्य डाक्टर जगदीशचन्द्र वसु महाशयने जो स्थावर सृष्टिमें जीव-सत्ता और इन्द्रियोंके अस्तित्वको पदार्थविद्याके क्रियासिद्धांश (Scientific demonstration) के द्वारा प्रमाणित करके

(Continued from Page 61.)

hours they always died, to the last sample. Repeated he took pure wellwater which was barren of animal life and put into it a few Cholera germs; they always began to propagate at once and alwas within six hours they swarmed and were numberable by milious upon millions. For ages the Hindoos have had absolute faith that the water of the Ganges was utterly pure, could not be defiled by any contact whatsoever, and infallibly made pure and clean whatsoever thing touched it. They still believed it, and that is why they bathe in it and drink it. The Hindoos have been laughed at these many generations, but the laughter will need to modify itself a little from now on. How did they find out the water's secret in those ancient ages? Had the germ-scientists then? We do not know. We know that they had a civilization long before we emerged from savagery."

समस्त पृथ्वीके सायन्सवेत्ताओंको चकित कर डाला है ये सब बातें महाभारत आदि आर्यग्रन्थों में पहलेसे ही वर्णित थीं। इन सब सायन्सके आविष्कारोंको देखकर कौन बुद्धिमान् व्यक्ति इस बातको स्वीकार नहीं करेगा कि, प्राचीन आर्योंने पदार्थ-विद्यामें भी बहुत कुछ उन्नति की थी। बङ्गालके सुप्रसिद्ध रसायनशास्त्रके पण्डित प्रोफेसर डाक्तर पी. सी. राय महाशयने पुस्तक-प्रणयन द्वारा पश्चिमी विद्वानोंको यह भली भाँति समझा

(Continued from Page 62)

In confirmation of this may be quoted what the Indian Medical Gazette notes :—

"It would appear as if modern science was coming to the aid of the ancient tradition in maintaining a special blessedness of the water of the Ganges. Mr. E. H. Hankins in the preface to the fifth edition of his excellent pamphlet 'on the Cause and Prevention of Cholera' writes as follows :—"Since I originally wrote this pamphlet I have discovered that the water of the Ganges and the Jumna is hostile to the growth of the Cholera microbe, not only owing to the absence of food materials, but owing to the actual presence of an antiseptic that has the power of destroying this microbe. At present I make no suggestion as to the origin of this mysterious antiseptic."

दिया है कि, रासायनिक विद्या (Chemistry) में प्राचीन आर्यगणने इतनी उन्नति की थी कि, उन सब उन्नतिकी बाँतोंको अभीतक यूरोपीय रासायनिक समझ नहीं सके हैं । उदाहरण-के तौर पर कहा जाता है कि, मकरध्वज नामक आयुर्वेदीय औषधिमें सुवर्णका पारेमें मिल जाना सिद्ध होनेपर भी पश्चिमी-रासायनिकगण अभी तक कह नहीं सके हैं कि कैसे ऐसा हो जाता है । प्राचीन कालमें एक धातुके दूसरे धातुमें परिणत करनेको जो क्रियाएं तन्त्रमें पाई जाती हैं वे यद्यपि इस समय लुप्तप्राय हो गई हैं तथापि, उनके भारतीय पदार्थविद्या द्वारा प्राचीनकालमें सुसिद्ध होनेके विषयमें कोई भी संशय नहीं हो सकता । यद्यपि पदार्थविद्याके जगत्में अभी बहुत कुछ आवि-ष्कार होने हैं और जितना जितना आविष्कार होता जायगा उतना उतना भारतीय प्राचीन गौरवका भी पता लगता जायगा, तथापि यह तो मानना ही पड़ेगा कि, प्राचीन भारतवासी पदार्थविद्यामें बहुत कुछ अभिज्ञ थे । केवल उनकी दृष्टि अध्यात्मराज्यकी ओर अधिक रहनेके कारण वे आवश्यकतासे अतिरिक्त पदार्थविद्यामें उन्नतिका प्रयोजन नहीं समझते थे ।

सनातनधर्म कामहत्त्व ।

सनातनधर्म आर्य जातिका प्राण है ।

जीवकी श्रेष्ठताका प्रमाण बुद्धि है, बुद्धिकी श्रेष्ठताका प्रमाण

ज्ञानाधिक्य है और ज्ञानकी श्रेष्ठताका प्रमाण धर्मज्ञानकी पूर्णता है। भारतवर्ष ही पृथिवीभरमें धर्मभूमि है, भारतमातासे ही और सब बालकोंने धर्मज्ञानकी शिक्षा पाई है। धर्मजगत्में भारतवर्ष ही आदिगुरु है। आर्य्यजातिके प्राचीनत्वमें तो किसीको संदेह ही नहीं रहा; पुनः आर्य्यग्रन्थोंसे और नाना बौद्ध ग्रन्थोंसे यह प्रमाण ही मिलता है कि, आर्य्यधर्मसे ही बौद्ध धर्मकी सृष्टि हुई है; सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुगके प्रायः तीन सहस्रवर्ष बीतने तक एक मात्र अभ्रान्त सनातन आर्य्यधर्म ही पृथिवीको पूर्णरूपसे प्रकाशित करता रहा; तत्पश्चात् ढाई सहस्र वर्षके लगभग बीते होंगे कि, इसी भारतभूमिमें श्रीभगवान् बुद्ध देवने प्रकट होकर बौद्ध धर्मके प्रचार द्वारा नये युगकी सृष्टि की और क्रमशः वह नया धर्म समस्त संसारमें फैल गया। अब भी बौद्ध धर्म और धर्मोंसे अधिक मनुष्योंमें प्रचलित है, अब भी एक तृतीयांशसे अधिक मनुष्यजाति इस धर्मको मानती है; परन्तु यह भी प्रमाणित ही है कि किसी कालमें यह धर्म समस्त पृथिवी पर व्याप्त हो गया था। यदिच अन्य समस्त संसार एक समय बौद्धधर्मावलम्बी हो गया था, तत्र च उस समय भी भारतवर्ष अभ्रान्त आर्य्यधर्मज्ञानसे शून्य न था, बहुत धार्मिकगण तब भी प्रधानरूपसें इस पवित्र भूमिमें उपस्थित थे, जिनके द्वारा ही पुनः इस धर्मका उद्धार हुआ। बौद्धधर्मसे नीचे अब ईसाई धर्मका विस्तार समझा जाता है, परन्तु बौद्ध ग्रन्थोंमें यह

स्पष्ट प्रमाण है कि, ईसाई धर्मप्रचारक महात्मा ईसाने प्रथम अवस्थामें इस भारतवर्षमें आकर यहाँके ब्राह्मण और बौद्ध आचार्य्योंके निकट विद्याभ्यास किया था और तत्पश्चात् बौद्धोंके निकट बौद्ध धर्ममें दीक्षित हो पुनः स्वदेशमें जाकर अपने उस नये धर्मकी सृष्टि की थी। केवल बौद्ध धर्मकी पुस्तकें ही इस विचारके प्रमाण नहीं हैं, किन्तु आर्य्यावर्त्तसे ईसाका सम्बन्ध हुआ था ऐसा प्रमाण सनातनधर्मकी पुस्तकों-में भी मिलता है और यूरोपकी प्रसिद्ध पंडिता मेडम ब्लेव्यस्की (Madam H. P. Blavatsky) ने अपने ग्रन्थोंमें नाना युक्ति द्वारा सिद्ध किया है कि, ईसाई धर्म बौद्ध धर्मका शिष्य है। ईसाई धर्मके नीचे आज दिन मुसलमान धर्म समझा जाता है; वह ईसाई धर्मका शिष्य है, इसमें तो सन्देह ही नहीं। मुसलमान धर्मप्रचारक महात्मा महम्मद अपने आप ही स्वीकार कर गये हैं कि, ईसामसी उनसे पूर्ववर्ती पैग़म्बर हैं और उन्होंने ईसाका सम्मान भी किया है; दूसरा प्रबल प्रमाण यह है कि, यह दोनों धर्म एक ही भूमिमें प्रकट हुए, जिनमेंसे ईसाई धर्म प्रथम प्रकट हुआ और उसके ५०० वर्षके उपरान्त मुसलमान धर्मने जन्म लिया था। इन परंपरा सम्बन्धोंसे भी यह प्रमाणित हुआ कि सनातन आर्य्य धर्म ही धर्म जगत्में आदि गुरु है। इससे ही शिक्षा पाकर अन्य नाना धर्मोंने होश सम्हाला था। सनातनधर्मकी श्रेष्ठताके तीन प्रबल प्रमाण हैं; प्रथम तो यह धर्म कबसे आरम्भ हुआ

अथवा कितने दिनसे चला आता है, इसका पता संसार भरमें किसीको भी नहीं है, द्वितीय प्रमाण यह है कि, और और धर्मावलम्बी परधर्मकी निन्दामें प्रवृत्त होकर उन पर-धर्मावलम्बियोंको स्वधर्म परित्यागका उपदेश देकर अपने धर्ममें लानेका यत्न करते हैं, परन्तु सनातनधर्ममें इस भ्रमपूर्ण अभ्यासका सम्बन्धमात्र नहीं है, तृतीय प्रमाण यह है कि, अन्य धर्मोंमें सब श्रेणीके मनुष्योंके लिये एक प्रकारका धर्म-साधन विहित है, चाहे वह परम बुद्धिमान् हो, चाहे जड़ मूर्ख, चाहे जितेन्द्रिय हो, चाहे गृहस्थ हो, चाहे संन्यासी, चाहे दरिद्र हो, चाहे परम ऐश्वर्य्यवान्, चाहे विकलांग रोगी हों, चाहे पूर्ण प्रकृतिवान्, उन सबोंके लिये ही अन्य धर्ममें एक ही प्रकारका साधन विहित है, परन्तु सनातनधर्ममें वह असम्पूर्णता नहीं देख पड़ती। इस अपौरुषेय धर्ममें अधिकार भेदके कारण साधन भेद इतना विशेष है कि जिससे सब श्रेणी-के मनुष्य ही अपनी योग्यताके अनुसार अपना अपना कल्याण साधन भली भाँति कर सक्ते हैं। सनातनधर्मकी मूर्त्तिपूजा, सनातनधर्मका द्वैत और अद्वैत विज्ञान, सनातनधर्मके योग-दर्शन, सांख्यदर्शन, वेदान्तदर्शन, आदि दर्शन सनातनधर्मके मंत्रयोग, हठयोग, लययोग और राजयोग, ये चार साधन मार्ग और सनातनधर्मशास्त्रोक्त सदाचार ही इस अभ्रान्त धर्मकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन कर रहे हैं।

आज कलके प्रधान प्रधान पश्चिमी विद्वानोंने यह मुक्तकण्ठ

होकर स्वीकार किया है कि, धर्मकी सूक्ष्मता और परलोक सम्बन्धीय गंभीर विचारमें जितना प्राचीन आर्य्यजातिने परिश्रम किया है और जितनी विलक्षणता दिखाई है उतना आजतक और कोई जाति नहीं कर सकी है। यह आर्य्यधर्मकी श्रेष्ठताका ही प्रमाण है कि, ईसाई धर्मावलम्बी होने पर भी प्रोफेसर मेक्समूलर (Professor Max Muller), प्रोफेसर विल्सन (Professor Wilson), डाक्टर डुवेसेन (Dr. Duessen) आदि पश्चिमी विद्वानोंने मुक्तकण्ठ होकर और धर्मोंके सम्मुख अभ्रान्त वैदिक धर्मकी महिमा गाई है। यह आर्य्यधर्ममतकी श्रेष्ठताका ही प्रमाण है कि, बिना चेष्टाके अपने आप ही फ्रांस, जर्मनी और अमेरिका आदि प्रदेशोंके असंख्य विद्वान्‌गण इस धर्मके पक्षपाती बनते जाते हैं। इस कारण अब यह कहना ही पड़ेगा कि आर्य्यगण ही अपनी श्रेष्ठ बुद्धि द्वारा ऐसे अभ्रान्त धर्मके आविष्कारकर्त्ता हैं। लौकिक विद्याओंकी उन्नतिमें वे सबके आदि गुरु हैं, तथा मनुष्यत्वकी पूर्णताका पूर्ण परिचय देनेवाली पूर्ण धर्म बुद्धिके प्राप्त करने वाले भी प्राचीन भारतवासी ही थे इसमें सन्देह मात्र नहीं है।

आर्यजातिके इतिहासके वर्णनप्रसङ्गमें प्राचीन आर्यगौरव-का कुछ दिग्‌दर्शन कराया गया। पाश्चात्य पण्डित मैक्समू-लरने एक स्थान पर कहा है कि "जो जाति अपने प्राचीन इति-हासके गौरवको भूल जाती है, वह कदापि अपने जातीय जीवनमें उन्नति लाभ नहीं कर सकती।" आर्यजाति पृथिवीकी

समस्त जातियोंकी शीर्ष स्थानीय होनेपर भी आज जो संसारके सामने हीन हो रही है इसका प्रधान कारण अपनेको तथा अपने पिता पितामहोंके गौरवको भूल जाना ही है; क्योंकि अतीत जीवनकी गौरवमयी भित्ति पर प्रतिष्ठित भविष्य जातीय जीवन ही—बहुकालस्थायी हो सक्ता है । किन्तु कालकी कुटिल गतिके प्रभावसे भारतवासी कुछ दिनोंसे अपने प्राचीन जीवन तथा पूर्वजोंके गौरवको भूलने लग गये थे । धर्महीन, जातीय गौरवहीन, विजातीय शिक्षा तथा आदर्शके प्रभावसे भारतवासी अपने ही देशमें विदेशी बनने लग गये थे। उन्हें अपनी कोई भी बात अच्छी नहीं लगती थी, अपने पूर्वजोंके जीवनमें कोई उन्नत बात हो सकती है ऐसा विश्वास भारतवासियोंके हृदयसे एकबार ही लुप्त होने लग गया था, प्राचीन शिल्पकला तथा आध्यात्मिक विद्याकी यहाँ कुछ भी उन्नति हुई थी ऐसा माननेमें भी उनको सङ्कोच अनुभव होने लगा था और यहाँ तक दुर्दशा हो गई थी कि, विदेशियोंके विकृत पाठको पढ़ कर नवीन भारतवासी अपने पूज्यपाद पितापितामहकी निन्दा करनेमें तथा उनकी समस्त विद्याओंको नीचा दिखानेमें ही अपनी विद्वत्ता तथा महत्त्व समझने लग गये थे। उनका बनाया हुआ वेद कृषकोंका गान है, उनका बनाया हुआ पुराण मिथ्या कपोलकल्पना मात्र है, उनके पूर्वज अज्ञान और कुसंस्कारपूर्ण असभ्य थे, उनका सामाजिक आचार, रीति नीति जातीय अवनतिकर कुसंस्कार

मात्र है इत्यादि इत्यादिरूपसे अपने देशकी सभी बातोंकी निन्दा करनेमें और विदेशीय आचरणकी स्तुति करनेमें ही भारतवासी अपना पाण्डित्य, समझने लग गये थे। परन्तु अब श्रीभगवान् की अपार कृपासे भारतवासियोंके हृदयाकाशसे अज्ञानका वह मेघ दूर होरहा है। भारतवासी अब अपने स्वरूपके पहचाननेमें तथा अपने अतीत जीवनके गौरवज्ञानमें अति उन्मुख होरहे हैं। इसलिये इस समय इस प्रकारके प्राचीन गौरवपूर्ण पुस्तककी अति आवश्यकता होनेसे इसका प्रकाश किया गया। भारत-वासियोंको सदा ही स्मरण रखना चाहिये कि, उनकी स्थूल जातीय मुक्ति अथवा आध्यात्मिक मुक्ति दोनों ही अपने यथार्थ स्वरूपज्ञानपर ही निर्भर करती है। इस सत्यसिद्धान्तको हृदय-में धारण करके आर्यजाति जितनी श्रद्धायुक्त होगी और प्राचीन आर्यमहर्षियोंके आदर्शपर अपने जीवनको गठित करनेके लिये पुरुषार्थशील होगी, उतनी ही उनकी पूर्वमहिमा पुनः प्रकट होकर आर्यजातिको समस्त संसारके सामने आदर्शजातिरूपसे प्रतिष्ठा पाने योग्य बना देगी, इसमें अणुमात्र सन्देह नहीं है।

पूज्यपाद त्रिकालदर्शी महर्षियोंकी महिमा जितनी की जाय उतनी ही कम है। जो कुछ मनुष्यज्ञान उपयोगी आविष्कार-समूह पूज्यपादगण कर गये हैं, जो कुछ सदाचार एवं धर्मका वर्णन वे प्रकाशित कर गये हैं, उस प्रकारकी पूर्णता न कभी हुई है, और न होगी। इस कारण आर्य्य सन्तान मात्रको उचित है कि अपने पूर्वगौरवको विस्मृत न हों और धैर्य्य

साहस, उद्यम तथा धर्मवृत्तिकी सहायतासे क्रमशः अपने पूर्व्व अवस्थाकी ओर अग्रसर होनेके लिये पुरुषार्थ करें। आर्य्य सन्तानगण स्वभावसे ही शान्तियुक्त और बुद्धिजीवी हैं; शान्त-गुणसे बुद्धिकी उन्नति होती है, और बुद्धिमान् पुरुष ही सत् असत् विचारयुक्त होकर अपना कर्त्तव्य विचार सकते हैं; इस कारण भारतवर्षीय महात्माओंको आशा है कि, आर्य्य सन्तान-गण पुनः अपने स्वरूपके अनुभव करनेमें समर्थ होंगे। आर्य्य सन्तानोंको सदा स्मरण रखना उचित है कि, वे ही पृथिवीके आदि गुरु-वंशोद्भव हैं; उनको विचारना उचित है कि, उनके पूर्व्व पुरुषोंका ज्ञान, उनके पूर्व्व पुरुषोंकी जीव-हितकारी वृत्ति, उनके पूर्व्व पुरुषोंका विषय-वैराग्य और उनके पूर्व्व पुरुषोंके आध्यात्मिक विचार द्वारा ही आज दिन जगत् आलोकित हो रहा है। उनको विचारना उचित है कि प्राचीन आर्य्यजाति ही आदि मनुष्य, प्राचीन आर्यजाति ही आदि सभ्य, प्राचीन आर्य्यजाति ही आदि शिल्पी, प्राचीन आर्य्यजाति ही आदि मनन शील, प्राचीन आर्य्य जाति ही आदि धार्मिक और प्राचीन आर्य्य जाति ही आदि आध्यात्मिक ज्ञान-अनुसंधानकारिणी थी इसमें सन्देह नहीं। उनको सदा स्मरण रखना उचित है कि, पूज्यपाद आर्य्य महर्षिगण ही आदि कवि, पूज्यपाद आर्य्य महर्षिगण ही आदि ज्ञानी, पूज्यपाद आर्य्य महर्षिगण ही आदि विज्ञानवित्, पूज्यपाद आर्य्य महर्षिगण ही आदि योगी और पूज्यपाद आर्य्य महर्षिगण ही आदि भगवद्भक्त थे, इसमें संशय मात्र नहीं है।

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

विज्ञापन।

—:※:—

यह सबको विदित ही है कि, काशीका 'निगमागम बुक डिपो' नामक पुस्तकालय बहुत वर्षोंसे हिन्दु समाज तथा हिन्दी संसारकी सेवा करता आया है। अबतक यह पुस्तकालय श्रीविश्वनाथ अन्नपूर्णा दानभण्डार द्वारा स्थापित होकर उसीके अधीन रहकर संचालित हो रहा था। अब सनातनधर्मावलम्बियोंकी सर्वाङ्गीण उन्नतिमें सहायता पहुँचानेके लिये १० लाख रुपयेके मूलधनसे 'भारतधर्म सिण्डिकेट लिमिटेड्' नामक एक कम्पनी संस्थापित हुई है, उसके अन्यान्य उद्देश्योंमें दो लाख रुपये लगाकर एक विराट् जातीय पुस्तक भण्डार स्थापित करना भी, एक उद्देश्य है। उस कम्पनीने अपनी इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिये उक्त निगमागम बुकडिपोको दानभंडारसे ले लिया है और उसका नाम न बदलकर 'निगमागम बुकडिपो' ही कायम रक्खा है। अब इस बुकडिपो विभाग द्वारा धार्मिक सामाजिक और देशहितसंबंधीय अनेक पुस्तकें प्रधानतः हिन्दीमें और अंग्रेजी तथा अन्यान्य प्रान्तीय भाषाओंमें शीघ्र प्रकाशित होंगी।

—:—

(यह प्रास्पेक्टस ज्वाइण्ट स्टाक कम्पनी यू० पी० के रजिस्ट्रारके यहाँ रजिस्टर हो गया है।)

भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेडका प्रास्पेक्टस्।

यह अद्वितीय जातीय संस्था मुद्रण, प्रकाशन, बुकडीपो, समाचारपत्र, बैंकिंग और एजेंसी विभाग द्वारा हिन्दुजाति के एक बड़े अभावकी पूर्ति के लिये स्थापित हुई है। प्रत्येक सहृदय हिन्दु नरनारी मात्रको इसके हिस्से खरीदकर इस स्वजातीय महत्कार्यमें योग दान करना उचित है। इससे धनका लाभ भी यथेष्ट होगा।

इसकी सन् १९१३ ई० के इण्डियन कम्पनीज ऐक्टकी ७ वीं धाराके अनुसार रजिस्टरी हो चुकी है।

हेड् आफिस

जगत्गञ्ज, स्टेशनरोड, बनारस सिटी।

मूलधन।

१००००००) दस लाख रुपये, निम्नलिखित ६५००० शेयरों-में विभाजित।

२०००० साधारण शेयर। प्रत्येक शेयर २५) का।

४००० प्रेफरेंस शेयर। प्रत्येक शेयर ५०) का, जिसपर ७॥) सैकड़ा सूद प्रतिवर्ष दिया जायगा।

१००० डिफर्ड शेयर। प्रत्येक शेयर १००) का।

डिफर्ड शेयरों के रुपये समाचार पत्रों के व्यवसायमें लगाये जायँगे।

४०००० संस्थापक के शेयर। प्रत्येक ५) का।

हिस्से इस प्रकार प्राप्त हो सकते हैं। साधारण (आर्डिनरी) शेयर प्रत्येकके लिये २) प्रार्थनापत्रके साथ और ५) अलाट-मेंट के समय भेजना होता है। प्रेफरेंस शेयर प्रत्येकके लिये ३) प्रार्थनापत्रके साथ और ७) अलाटमेंटके समय भेजना होता है। डिफर्ड शेयर प्रत्येकके लिये ५) प्रार्थना पत्रके साथ और २०) अलाटमेंटके समय भेजना होता है।

मैनेजिंग डाइरेक्टर, भारतधर्म सिण्डिकेट लिमिटेड, काशी।

भारतधर्म।

हिन्दु धर्म तथा हिन्दु जीवनमें जागृति उत्पन्न करनेवाला विविध विषय विभूषित उक्त राष्ट्रीय साप्ताहिकपत्र प्रति मंगल-वारको प्रकाशित होता है। छपाई सुन्दर, कागज मोटा, कवर रंगीन, पृष्ठ १६, बंधाई उत्तम, लिखावट मनोहर, विषय उत्तेजक और ग्राहक संख्या भरपूर होनेसे पाठक और विज्ञापनदाता दोनोंको इससे लाभ होगा। आज ही ग्राहक श्रेणीमें नाम लिखवाइये और विज्ञापन भेजिये। वार्षिक मूल्य केवल ३) है।

मैनेजर

'भारतधर्म' बनारस सिटी।

महाशक्ति।

'भारतधर्म' के ही उद्देश्य से उसी ढाँचेका यह अंग्रेजी साप्ताहिकपत्र प्रति शनिवारको प्रकाशित होता है। मूल्य केवल ६) वार्षिक है। ग्राहक बनिये और विज्ञापन भेजिये।

मैनेजर

'महाशक्ति' बनारस सिटी।

सनातन धर्मकी पुस्तकें।

धर्मकल्पद्रुम।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

यह हिन्दूधर्मका अद्वितीय और परमावश्यक ग्रंथ है। हिन्दू जातिकी पुनरुन्नतिके लिये जिन जिन आवश्यकीय विषयोंकी जरूरत है, उनमेंसे सबसे बड़ा भारी जरूरत एक ऐसे धर्मग्रन्थकी थी कि, जिसके अध्ययन अध्यापनके द्वारा सनातनधर्मका रहस्य और उसका विस्तृत स्वरूप तथा उसके अङ्ग उपांगोंका यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो सके और साथ ही साथ वेदों और सब शास्त्रोंका आशय तथा वेदों और सब शास्त्रोंमें कहे हुए विज्ञानोंका यथाक्रम स्वरूप जिज्ञासुको भलीभांति विदित हो सके। इसी गुरुतर अभावको दूर करनेके लिये भारतके प्रसिद्ध धर्मवक्ता और श्रीभारतधर्म महामण्डलस्थ उपदेशक महाविद्यालयके दर्शनशास्त्रके अध्यापक श्रीमान् स्वामी दयानन्दजी महाराजने इस ग्रन्थका प्रणयन करना प्रारम्भ किया है। इसमें वर्तमान समयके आलोच्य सभी विषय विस्तृतरूपसे दिये जायँगे। अबतक इसके छः खण्डोंमें जो अध्याय प्रकाशित हुए हैं, वे ये हैंः—धर्म्म, दानधर्म्म, तपोधर्म, कर्म्मयज्ञ, उपासनायज्ञ, ज्ञानयज्ञ, महायज्ञ, वेद, वेदांग, दर्शनशास्त्र (वेदोपांग) स्मृतिशास्त्र, पुराणशास्त्र, तन्त्रशास्त्र उपवेद, ऋषि,और पुस्तक, साधारण धर्म्म और विशेष धर्म्म, वर्णधर्म्म, आश्रमधर्म्म, नारीधर्म्म (पुरुषधर्म्मसे नारीधर्म्मकी विशेषता), आर्य्यजाति

समाज और नेता, राजा और प्रजाधर्म्म, प्रवृत्तिधर्म्म और निवृत्तिधर्म्म, आपद्धर्म्म, भक्ति और योग, मन्त्रयोग, हठयोग, लययोग, राजयोग, गुरु और दीक्षा, वैराग्य और साधन, आत्मतत्त्व, जीवतत्त्व, प्राण और पीठतत्त्व, सृष्टिस्थितिप्रलय तत्त्व, ऋषि, देवता और पितृतत्त्व, अवतारतत्त्व, मायातत्त्व, त्रिगुणतत्त्व, त्रिभावतत्त्व, कर्मतत्त्व मुक्तितत्त्व, पुरुषार्थ और वर्णाश्रमसमीक्षा, दर्शनसमीक्षा, धर्मसम्प्रदायसमीक्षा, धर्म-पन्थसमीक्षा और धर्ममतसमीक्षा। इस ग्रंथसे आजकलके अशास्त्रीय और विज्ञानरहित धर्मग्रन्थों और धर्म्मप्रचारके द्वारा जो हानि हो रही है, वह सब दूर होकर यथार्थरूपसे सनातन वैदिक धर्म्मका प्रचार होगा। इस ग्रंथ रत्नमें साम्प्रदायिक पक्षपातका लेशमात्र भी नहीं है और निष्पक्षरूपसे सब विषय प्रतिपादित किये गये हैं, जिससे सकल प्रकारके अधिकारी कल्याण प्राप्त कर सकें। इसमें और भी एक विशेषता यह है कि, हिन्दूशास्त्रके सभी विज्ञान शास्त्रीय प्रमाणों और युक्तियोंके सिवाय, आजकलकी पदार्थ विद्या (Science) के द्वारा भी प्रतिपादित किये गये हैं, जिससे आजकलके नवशिक्षित पुरुष भी इससे लाभ उठा सकें। इसके छः खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। प्रथम खण्डका मूल्य २), द्वितीयका १॥), तृतीयका २), चतुर्थका २), पंचमका २) और षष्ठका १॥) है। इसके प्रथम दो खण्ड बढ़िया कागज पर भी छापे गये हैं और दोनों ही एक बहुत सुन्दर जिल्दमें बाँधे गये हैं। मूल्य ५) है। सातवाँ खण्ड यन्त्रस्थ है।

प्रवीण दृष्टिमें नवीन भारत।

श्रीस्वामी दयानन्द सम्पादित।

इस ग्रंथमें आर्यजातिका आदिका वास स्थान, उन्नतिका

आदर्श निरूपण, शिक्षादर्श, आर्यजीवन, वर्णधर्म आश्रम-धर्म आदि विषय वैज्ञानिक युक्ति तथा शास्त्रीय प्रमाणोंके साथ वर्णित किये गये हैं। यह ग्रन्थ धर्मशिक्षाके अर्थ बी. ए. क्लासका पाठ्य है। मूल्य २)।

नवीन दृष्टिमें प्रवीण भारत।

श्रीस्वामी दयानन्द सम्पादित।

भारतका प्राचीन गौरव और आर्यजातिका महत्त्व जाननेके लिये यह एक ही पुस्तक है। इसका द्वितीय संस्करण परिवर्द्धित और सुन्दर होकर छप चुका है। यह ग्रन्थ भी बी० ए० क्लासका पाठ्य है। मूल्य १)

साधनचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

इसमें मन्त्रयोग, हठयोग, लययोग और राजयोग इन चारों योगोंका संक्षिप्तमें अति सुन्दर वर्णन किया गया है। यह ग्रन्थ प्रथम वार्षिक एफ. ए. क्लासका पाठ्य है। मूल्य १॥)

शास्त्रचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

यह ग्रन्थ हिन्दुशास्त्रोंकी बातें दर्पणवत् प्रकाशित करनेवाला है। यह ग्रन्थ द्वितीय वार्षिक एफ. ए. कलासका पाठ्य है।

[यन्त्रस्थ]

धर्मचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

एन्ट्रेंस कलासके बालकोंके पाठनोपयोगी उत्तम धर्मपुस्तक है। इसमें सनातन धर्मका उदार सार्वभौम स्वरूपवर्णन,

यज्ञ, दान, तप आदि धर्माङ्गोंका विस्तृत वर्णन, वर्णधर्म, आश्रमधर्म, नारीधर्म, आर्यधर्म, राजधर्म, तथा प्रजाधर्मके विषयमें बहुत कुछ लिखा गया है। कर्मविज्ञान, सन्ध्या, पञ्चमहायज्ञ आदि नित्यकर्मोंका वर्णन, षोड़श संस्कारोंके पृथक् पृथक् वर्णन और संस्कारशुद्धि तथा क्रियाशुद्धि द्वारा मोक्षका यथार्थ मार्ग निर्देश किया गया है। इस ग्रंथके पाठसे छात्रगण धर्मतत्त्व अवश्य ही अच्छी तरहसे जान सकेंगे। मूल्य १)

आर्य गौरव।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

आर्यजातिका महत्त्व जाननेके लिये यह एक ही पुस्तक है। यह ग्रन्थ स्कूलकी ९ वीं तथा १० वीं कक्षाका पाठ्य है। मूल्य ॥) है।

आचारचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

यह भी स्कूलपाठ्य सदाचार सम्बन्धीय धर्मपुस्तक है। इसमें प्रातःकालसे लेकर रात्रिमें निन्द्राके पहले तक क्या क्या सदाचार किस लिये प्रत्येक हिन्दुसन्तानको अवश्य ही पालने चाहिये, इसका रहस्य उत्तम रीतिसे बताया गया है और आधुनिक समयके विचारसे प्रत्येक आचारपालनका वैज्ञानिक कारण भी दिखाया गया है। यह ग्रन्थ बालकोंके लिये अवश्य ही पाठ करने योग्य है। यह स्कूलकी ८ वीं कक्षाका पाठ्य है। मूल्य ॥)

नीतिचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

मानवीय जीवनका उन्नत होना नीतिशिक्षापर ही अव-

लम्बित होता है। कोमलमति बालकोंके हृदयोंपर नीतितत्त्व खचित करनेके उद्देश्यसे यह पुस्तिका लिखी गई है। इसमें नीतिकी सब बातें ऐसी सरलतासे समझाई गई हैं कि, इस एकके ही पाठसे नीतिशास्त्रका ज्ञान हो सकता है। यह स्कूलकी ७ वीं कक्षाका पाठ्य है। मूल्य ॥)

चरित्रचन्द्रिका।

सम्पादक पं० गोविन्दशास्त्री दुगवेकर।

इस ग्रन्थमें पौराणिक ऐतिहासिक और आधुनिक महापुरुषोंके सुन्दर मनोहर विचित्र चरित्र वर्णित हैं। यह ग्रन्थ स्कूलकी ६ ठीं कक्षाका पाठ्य है। प्रथम भागका मूल्य १)

धर्मप्रश्नोत्तरी।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

सनातनधर्मके प्रायः सब सिद्धान्त अति संक्षिप्तरूपसे इस पुस्तिकामें लिखे गये हैं। प्रश्नोत्तरीकी प्रणाली ऐसी सुन्दर रक्खी गई है कि, छोटे बच्चे भी धर्मतत्त्वोंको भलीभांति हृदयङ्गम कर सकेंगे। भाषा भी अति सरल है। यह ग्रन्थ स्कूलकी ४ थी कक्षाका पाठ्य है। कागज और छपाई बढ़ियाँ होनेपर भी मूल्य केवल।) मात्र है।

परलोक रहस्य।

श्रीमान् स्वामी दयानन्द विरचित।

मनुष्य मर कर कहाँ जाता है, उसकी क्या गति होती है, इस विषय पर वैज्ञानिक युक्ति तथा शास्त्रीय प्रमाणोंके साथ विस्तृतरूपसे वर्णन है। मूल्य।)

चतुर्दशलोक रहस्य ।

श्रीमान् स्वामी दयानन्द विरचित ।

स्वर्ग और नरक कहाँ और क्या वस्तु है, उनके साथ हमारे इस मृत्युलोक का क्या सम्बन्ध है इत्यादि विषय शास्त्र और युक्तिके साथ वर्णित किये गये हैं। आजकल स्वर्ग नरक आदि लोकोंके विषयमें बहुत संशय फैल रहा है। श्रीमान् स्वामीजी महाराजने अपनी स्वाभाविक सरल युक्तियोंके द्वारा चतुर्दश लोकों का रहस्य वर्णन करते हुए उस सन्देह का अच्छा समाधान किया है। मूल्य ।)

सती-चरित्र-चन्द्रिका ।

श्रीमान् पं० गोविन्द शास्त्री दुगवेकर सम्पादित ।

इस पुस्तकमें सीता, सावित्री, गार्गी, मैत्रेयी आदि ४४ सती स्त्रियोंके जीवन चरित्र लिखे गये हैं। मूल्य २)

नित्य कर्म चन्द्रिका ।

इस ग्रन्थमें प्रातःकालसे लेकर रात्रि पर्यन्त हिन्दुमात्रके अनुष्ठान करने योग्य नित्य कर्म वैदिक तांत्रिक मन्त्रोंके साथ भली भांति वर्णित किये गये हैं। मूल्य ।)

धर्मसोपान ।

यह धर्मशिक्षा विषयक बड़ी उत्तम पुस्तक है। बालकोंको इससे धर्मका साधारण ज्ञान भलीभांति हो जाता है। यह पुस्तक क्या बालक बालिका, क्या वृद्ध स्त्री पुरुष, सबके लिये बहुत ही उपकारी है। धर्मशिक्षा पानेकी इच्छा करनेवाले सज्जन अवश्य इस पुस्तकको मंगावें। यह स्कूलकी ५ वीं कक्षाका पाठ्य है। मूल्य ।) आना।

सदाचारसोपान ।

यह पुस्तक कोमलमति बालक बालिकाओंकी धर्मशिक्षाके लिये प्रथम पुस्तक है। यह स्कूलकी तीसरी कक्षाका पाठ्य है। मूल्य -) एक आना ।

कन्याशिक्षासोपान।

कोमलमति कन्याओंको धर्मशिक्षा देनेके लिये यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी है । मूल्य -)

ब्रह्मचर्यसोपान ।

ब्रह्मचर्य्य व्रत की शिक्षाके लिये यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी है।सब ब्रह्मचारी आश्रम, पाठशाला और स्कूलोंमें इस ग्रंथकी पढ़ाई होनी चाहिये । मूल्य ।) चार आना ।

राजशिक्षा सोपान।

राजा महाराजा और उनके कुमारोंको धार्मिक शिक्षा देनेके लिये यह ग्रंथ बनाया गया है; परन्तु सर्वसाधारणकी धर्म्मशिक्षाके लिये भी यह ग्रंथ बहुत ही उपयोगी है, इसमें सनातन धर्मके अंग और उसके तत्त्व अच्छी तरह बताये गये हैं । मूल्य ≡) तीन आना ।

साधनसोपान ।

यह पुस्तक उपासना और साधनशैलीकी शिक्षा प्राप्त करनेमें बहुत ही उपयोगी हैं । इसका बंगला अनुवाद भी छप चुका है । बालक बालिकाओंको पहलेसे ही इस पुस्तकको पढ़ना चाहिये । यह पुस्तक ऐसी उपकारी है कि, बालक और वृद्ध समानरूपसे इससे साधनविषयक शिक्षा लाभ कर सकते हैं । मूल्य ।) चार आना ।

शास्त्रसोपान ।

सनातनधर्मके शास्त्रोंका संक्षेप सारांश इस ग्रंथमें वर्णित है। सब शास्त्रोंका कुछ विवरण समझनेके लिये प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बीके लिये यह ग्रंथ बहुत ही उपयोगी है। मूल्य ।) चार आना।

धर्मप्रचारसोपान ।

यह ग्रन्थ धर्मोपदेशक देनेवाले उपदेशक और पौराणिक पण्डितोंके लिये बहुत ही हितकारी है। मूल्य ≡) आना।

उपदेशपारिजात ।

यह संस्कृत गद्यात्मक अपूर्व ग्रंथ है। सनातनधर्म क्या है, धर्मोपदेश किसको कहते हैं, सनातनधर्मके सब शास्त्रोंमें क्या २ विषय हैं, धर्मवक्ता होनेके लिये किन २ योग्यताओंके होनेकी आवश्यकता है, इत्यादि अनेक विषय इस ग्रन्थमें हैं। संस्कृत विद्वान्मात्रको पढ़ना उचित है, और धर्मवक्ता, धर्मोपदेशक, पौराणिक पण्डित आदिके लिये तो यह ग्रंथ सब समय साथ रखने योग्य है। मूल्य ॥) आठ आना।

कल्किपुराण ।

कल्किपुराणका नाम किसने नहीं सुना है? इस कलियुग में कल्कि महाराज अवतार धारण कर, दुष्टोंका संहार करेंगे, उसका पूर्ण वृत्तान्त है। वर्तमान समयके लिये वह बहुत हितकारी ग्रन्थ है। विशुद्ध हिन्दी अनुवाद और विस्तृत भूमिका सहित यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। धर्मजिज्ञासुमात्र-को इस ग्रंथको पढ़ना उचित है। मूल्य १॥)

योगदर्शन ।

हिन्दीभाष्यसहित । इस प्रकारका हिन्दी भाष्य और कहीं प्रकाशित नहीं हुआ है । सब दर्शनोंमें योगदर्शन सर्ववादि-सम्मत दर्शन है और इसमें साधनके द्वारा अन्तर्जगत्के सब विषयोंका प्रत्यक्ष अनुभव करा देनेकी प्रणाली रहनेके कारण इसका पाठन और भाष्य एवं टीकानिर्माण वही सुचारुरूपसे कर सकता है, जो योगके क्रियासिद्धांशका पारगामी हो । इस भाष्यके निर्माणमें पाठक उक्त विषयकी पूर्णता देखेंगे । प्रत्येक सूत्रका भाष्य प्रत्येक सूत्रके आदिमें भूमिका देकर ऐसा क्रम-बद्ध बना दिया गया है कि, जिससे पाठकोंको मनोनिवेश-पूर्वक पढ़नेपर कोई असम्बद्धता नहीं मालूम होगी और ऐसा प्रतीत होगा कि, महर्षि सूत्रकारने जीवोंके क्रमाभ्युदय और निःश्रेयसके लिये मानो एक महान् राजपथ निर्माण कर दिया है । इसका द्वितीय संस्करण छपकर तैयार है, इसमें इस भाष्यको और भी अधिक सुस्पष्ट, परिवर्द्धित और सरल किया गया है । मूल्य २) दो रुपया ।

श्रीभारतधर्ममहामण्डलरहस्य ।

इस ग्रंथमें सात अध्याय हैं । यथा—आर्य्यजातिकी दशाका परिवर्त्तन, चिन्ताका कारण, व्याधिनिर्णय, औषधिप्रयोग, सुपथ्यसेवन, बीजरक्षा और महायज्ञसाधन । यह ग्रन्थरत्न हिन्दूजातिकी उन्नतिके विषयका असाधारण ग्रंथ है । प्रत्येक सनातनधर्मावलम्बीको इस ग्रन्थको पढ़ना चाहिये । द्वितीया-वृत्ति छप चुकी है, इसमें बहुतसा विषय बढ़ाया गया है । इस ग्रन्थका आदर सारे भारतवर्षमें समानरूपसे हुआ है । धर्मके गूढ़ तत्त्व भी इसमें बहुत अच्छी तरहसे बताये गये हैं । इसका बंगला अनुवाद भी छप चुका है । मूल्य १।)

निगमागमचन्द्रिका ।

प्रथम और द्वितीय भागकी दो पुस्तकें धर्मानुरागी सज्जनों-को मिल सकती हैं। इन दोनों भागोंमें सनातनधर्मके अनेक गूढ़ रहस्यसम्बन्धी ऐसे ऐसे प्रबन्ध प्रकाशित हुए हैं कि, आज तक वैसे धर्मसम्बन्धी प्रबन्ध और कहीं भी प्रकाशित नहीं हुए हैं। जो धर्मके अनेक रहस्य जानकर तृप्त होना चाहें, वे इन पुस्तकोंको मंगावें। प्रत्येकका मूल्य १)

भक्तिदर्शन ।

श्रीशाण्डिल्य सूत्रोंपर बहुत विस्तृत हिन्दी भाष्यसहित और एक अति विस्तृत भूमिकासहित यह ग्रंथ प्रणीत हुआ है। हिन्दीका यह एक असाधारण ग्रन्थ है। ऐसा भक्तिसम्बन्धी ग्रन्थ हिन्दीमें पहले प्रकाशित नहीं हुआ था। भगवद्भक्तिके विस्तृत रहस्योंका ज्ञान इस ग्रंथके पाठ करनेसे होता है। भक्तिशास्त्रके समझनेकी इच्छा रखनेवाले और श्रीभगवान्में भक्ति करनेवाले धार्मिक मात्रको इस ग्रन्थको पढ़ना उचित है। मू० १) एक रुपया।

मन्त्रयोगसंहिता ।

भाषानुवादसहित। योगविषयक ऐसा अपूर्व ग्रंथ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ है। इसमें मन्त्रयोग के १६ अङ्ग और क्रमशः उनके लक्षण, साधनप्रणाली आदि सब अच्छी तरहसे वर्णन किये गये हैं। इसमें मंत्रोंका स्वरूप और उपास्य निर्णय बहुत अच्छा किया गया है और अनर्थकारी साम्प्रदायिक विरोधके दूर करनेके लिये यह एक मात्र ग्रंथ है, इसमें नास्तिकोंके मूर्ति पूजा, मन्त्रसिद्धि आदि विषयोंमें जो प्रश्न होते हैं, उनका अच्छा समाधान है। मूल्य १) एक रु०।

हठयोग संहिता ।

भाषानुवादसहित । योगविषयक ऐसा अपूर्व ग्रंथ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ है । इसमें हठयोगके ७ अङ्ग और क्रमशः उनके लक्षण साधनप्रणाली आदि सब अच्छी तरहसे वर्णन किये गये हैं । गुरु और शिष्य दोनों ही इससे पूरा लाभ उठा सकते हैं । मूल्य ॥।) आ०

तत्त्वबोध ।

भाषानुवाद और वैज्ञानिक टिप्पणीसहित । यह मूल वेदान्त ग्रन्थ श्रीशंकराचार्य्यकृत है। इसका वंगानुवाद भी प्रकाशित हो चुका है । मूल्य =) दो आना ।

स्तोत्र कुसुमाञ्जली ।

इसमें पञ्चदेवता, अवतार और ब्रह्मकी स्तुतियोंके साथ साथ आजकलकी आवश्यकतानुसार धर्मस्तुति गंगादि पवित्र तीर्थोंकी स्तुति, वेदान्तप्रतिपादक स्तुतियां और काशीके प्रधान देवता श्रीविश्वनाथादिकी स्तुतियां हैं। मू० ।) आना

दैवीमीमांसादर्शन प्रथम भाग ।

वेदके तीन काण्ड हैं । यथाः-कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड। ज्ञानकाण्डका वेदान्तदर्शन, कर्मकाण्डका जैमिनीयदर्शन और भरद्वाजदर्शन और उपासनाकाण्डका यह अङ्गिरादर्शन है । इसका नाम दैवीमीमांसादर्शन है । यह ग्रंथ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ था। इसके चार पाद हैं, यथाः-प्रथम रसपाद, इस पादमें भक्तिका विस्तारित विज्ञान वर्णित है। दूसरा सृष्टिपाद, तीसरा स्थितिपाद और चौथा लयपाद, इन तीनों पादोंमें दैवीमाया, देवताओंके भेद, उपा-

सनाका विस्तारित वर्णन और भक्ति तथा उपासनासे मुक्ति-की प्राप्तिका सब कुछ विज्ञान वर्णित है। इस प्रथम भागमें इस दर्शनशास्त्रके प्रथम दो पाद हिन्दी अनुवाद और हिन्दीभाष्य-सहित प्रकाशित हुए हैं। मूल्य १॥) डेढ़ रुपया।

श्रीमद्भगवद्गीता प्रथमखण्ड।

श्रीगीताजीका अपूर्व्व हिन्दी-भाष्य यह प्रकाशित हो रहा है जिसका प्रथम खण्ड, जिसमें प्रथम अध्याय और द्वितीय अध्यायका कुछ हिस्सा है, प्रकाशित हुआ है। आज तक श्रीगीताजीपर अनेक संस्कृत और हिन्दी-भाष्य प्रकाशित हुए हैं, परन्तु इस प्रकारका भाष्य आज तक किसी भाषामें प्रकाशित नहीं हुआ है। गीताका अध्यात्म, अधिदैव, अधि-भूतरूपी त्रिविध स्वरूप, प्रत्येक श्लोकका त्रिविध अर्थ और सब प्रकारके अधिकारियोंके समझने योग्य गीता-विज्ञानका विस्तारित विवरण इस भाष्यमें मौजूद है। मूल्य १) एक रुपया

सप्त गीताएँ।

पञ्चोपासनाके अनुसार पाँच प्रकारके उपासकोंके लिये पांच गीताएं-श्रीविष्णुगीता, श्रीसूर्य्यगीता, श्रीशक्तिगीता, श्रीधीशगीता और श्रीशम्भुगीता एवं संन्यासियोंके लिये संन्यासगीता और साधकोंके लिये गुरुगीता भाषानुवाद-सहित छप चुकी हैं। श्रीभारतधर्म महामण्डलने इन सात गीताओंका प्रकाशन निम्नलिखित उद्देश्योंसे किया है:-१म, जिस साम्प्रदायिक विरोधने उपासकोंको धर्मके नामसे अधर्म्म सञ्चित करनेकी अवस्थामें पहुंचा दिया है, जिस साम्प्र-दायिक विरोधने उपासकोंको अहंकार त्यागी होनेके स्थानमें घोर सम्प्रदायिक अहंकारसम्पन्न बना दिया है, भारतकी

वर्तमान दुर्दशा, जिस साम्प्रदायिक विरोधका प्रत्यक्ष फल है, और जिस साम्प्रदायिक विरोधने साकार उपासकोंमें घोर द्वेषदावानल प्रज्वलित कर दिया है, उस साम्प्रदायिक विरोधका समूल उत्मूलन करना और २ य, उपासनाके नामसे जो अनेक इन्द्रियासक्तिकी चरितार्थताके घोर अनर्थकारी कार्य होते हैं उनका समाजमें अस्तित्व न रहने देना तथा ३ य समाजमें यथार्थ भगवद्भक्तिके प्रचार द्वारा इहलौकिक और पारलौकिक अभ्युदय तथा निःश्रेयस-प्राप्तिमें अनेक सुविधाओंका प्रचार करना। इन सातों गीताओंमें अनेक दार्शनिक तत्त्व, अनेक उपासनाकाण्डके रहस्य और प्रत्येक उपास्य देवकी उपासनासे सम्बन्ध रखनेवाले विषय सुचारुरूपसे प्रतिपादित किये गये हैं। ये सातों गीताएँ उपनिषद्रूप हैं। प्रत्येक उपासक अपने उपास्यदेवकी गीतासे तो लाभ उठावेगा ही; किन्तु अन्य चार गीताओंके पाठ करनेसे भी वह अनेक उपासनातत्त्वोंको तथा अनेक वैज्ञानिक रहस्योंको जान सकेगा और उसके अन्तः-करणमें प्रचलित साम्प्रदायिक ग्रंथोंसे जैसा विरोध उदय होता है वैसा नहीं होगा, वह परम शान्तिका अधिकारी हो सकेगा। संन्यासगीतामें सब सम्प्रदायोंके साधु और संन्यासि-योंके लिये सब जानने योग्य विषय सन्निविष्ट हैं। संन्यासिगण इसके पाठ करनेसे विशेष ज्ञान प्राप्तकर सकेंगे। गृहस्थोंके लिये भी यह ग्रन्थ धर्म ज्ञानका भण्डार है। श्रीमहामण्डल-प्रकाशित गुरुगीताके सदृश ग्रन्थ आज तक किसी भाषामें प्रकाशित नहीं हुआ है। इसमें गुरु शिष्यलक्षण, उपासनाका रहस्य और भेद, मन्त्र हठ लय और राजयोगोंके लक्षण और अङ्ग एवं गुरुमहात्म्य, शिष्यकर्तव्य, परम तत्त्वका स्वरूप और गुरुशब्दार्थ आदि सब विषय स्पष्टरूपसे हैं। मूल, स्पष्ट सरल

और सुमधुर भाषानुवाद और वैज्ञानिक टिप्पणी सहित यह ग्रंथ छपा है। गुरु और शिष्य दोनोंके लिये यह उपकारी ग्रन्थ है। चुकी हैं। विष्णुगीताका मूल्य १) सूर्य्यगीताका मूल्य ॥) शक्तिगीताका मूल्य १) धीशगीताका मूल्य ॥।) शंभुगीताका मूल्य १) संन्यासगीताका मूल्य ॥।) और गुरुगीताका मूल्य ।) है। इनमेंसे पञ्चोपासनाकी पांच गीताओंमें एक एक तीन-रंगा विष्णुदेव, सूर्य्यदेव, भगवती और गणपतिदेव तथा शिवजीका चित्र भी दिया गया है। शम्भुगीतामें वर्णाश्रमबन्ध नामक चित्र भी देखने योग्य है।

"THE WORLD'S ETERNAL RELIGION"

A Unique work on Hinduism in one volume, containing 24 Chapters with tri-colour illustrations, glossary, etc. No work has hitherto appeared in English that gives in a suggestive manner the real exposition of the Hindu religion in all its phases. The book has perfectly supplied this long-felt want. The names of the chapters are as fllows:—1, Foreword. 2. Universel Religion, 3. Classification of Religion. 4. Law of Karma, 5 Worship in all its phases, 6. Pratice of Yoga through Mantras, 7. Practice of Yoga through physical exersise, 8. Practice of Yoga through finer force of Nature. 9. Yoga through power of reaosoning. 10 The Mystic Circle, 11. Love and Devotion. 12. Planes of Knowledge, 13. Time, space, creation. 14. The Occult world, 15. Evolution and Reincarnation. 15. Hindu Philosophy. 17. The System of Castes and Stages of Life, 18. Woman's Dharma, 19. Image Worship, 20. The great Sacrifices. 28. Hindu Scriptures, 22. Liberation. 23. Education, 24. Reconciliation of all Religons. The followers of all religions in the world will profit by the light the work is intended to give. Price cloth bound, superior edition Rs. 5, Ordinary edition Rs. 3, postage extra.

अन्यान्य पुस्तकें।

बन्देमातरम्	)॥।
स्वराज्यप्रश्नोत्तरी	-)॥
भारतकी जागती हुई आत्मा	-)
गीता रहस्य (तिलकका)	-)॥
विद्यार्थी और राजनीतिक आन्दोलन	-)
असभ्य रमणी	=)
आनन्द रघुनन्दन नाटक	॥)
इश्क दोहावली	)।
उपन्यास कुसुम	≡)
कार्त्तिकप्रसादकी जीवनी	=)
कृषि विद्या	॥।)
गावंश चिकित्सा	।)
गोमाताकी जय	-)
दुर्गेश नन्दिनी २ भाग	।=)
देवपूजा प्रयोग	-)
धनुर्वेद संहिता	।)
प्रयाग माहात्म्य	॥=)
मानस मञ्जरी	।)
प्रवासी	=)
बारहमासी	-)
मङ्गलदेव पराजय	=)
मेगास्थनीजका भारतवर्षीय वर्णन	॥=)
राग रत्नाकर	२)
रसिक विलास	।=)
रामगीता (छोटी)	≡)
वसन्त शृङ्गार	≡)
वारेनहेस्टिंगस	१)
वैष्णव रहस्य	)॥
वीरबाला (उपन्यास)	॥।)
व्रतोत्सवचन्द्रिका (हिन्दु त्यौहारोंका शास्त्रीय विवेचन)	३)
शास्त्रीजीके दो व्याख्यान	॥=)
सिद्धान्त कौमुदी	२)
सार मञ्जरी	।)
क्षत्रिय हितैषिणी	-)
भूदेव चरित्र	१॥)
आचार प्रवन्ध	१)
पारिवारिक प्रबन्ध	१)
कल्पलतिका बाल चिकित्सा	।)
संक्षिप्त भूदेव चरित्र	=)
रामगीता रायल	५)
Lotus Leaves	2-8-0
Hindu Philosophy	3-0-0
English Grammar	0-4-0
Tilak's Message	0-12-0
National Education	0-12-0
Swadeshi (by Mahatma Gandhi)	-1-
Five Patriots on Home Rule	-1-
Home Rule Questions & Answers	-1-
Bureaucratic Lila	-1-
Tilak's Great Speech	-1-
Warship of the motherland	0-6-0

स्थिर ग्राहकोंके नियम।

(१) इनमेंसे जो कमसे कम ४) मूल्यकी पुस्तकें पूरे मूल्यमें खरीदेंगे अथवा स्थिर ग्राहक होनेका चन्दा १) भेज दें उन्हें शेष और आगे प्रकाशित होनेवाली सब पुस्तकें पौने मूल्यमें दी जायँगी।

(२) स्थिर ग्राहकोंको मालामें प्रकाशित होनेवाली हर ए पुस्तक खरीदनी होगी। जो पुस्तक इस विभाग द्वारा छा जायगी, वह एक विद्वानोंकी कमेटी द्वारा पसन्द करा जायगी।

(३) हर एक ग्राहक अपना नम्बर लिखकर या दिखा हमारे कार्य्यालयसे अथवा जहाँ वह रहता हो वहाँ हमारी शाखा हो, तो वहाँसे स्वल्प मूल्यपर पुस्तकें खरीद सकेगा।

(४) जो धर्मसभा इस धर्मकार्य्यमें सहायता करना चाहें और जो सज्जन इस ग्रन्थमालाके स्थायी ग्राहक होना चाहें, वे नीचे लिखे पते पर पत्र भेजनेकी कृपा करें।

मैनेजर, निगमागम

भारतधर्म सिण्डिकेट लिमिटेड्, स्टेशन रोड्, बना

———

Occult world,
hilosophy.
f Life, 18.
0. The great
beration. 23.
ns. The
ofit by the
oth bound,
3, postage

श्री आर्य महिला-हितकारिणी महापरिषद्

कार्य सम्पादिका:—हर हाईनेस धर्म-सावित्री महारानी व कुमारी देवी, नरसिंह गढ़।

भारतवर्ष की प्रतिष्ठित रानी-महारानियों तथा विदुषी हिलाओं के द्वारा, श्री भारत धर्म महामण्डल की निरी- में आर्य माताओं की उन्नति की सदिच्छा से यह महा- श्री काशी पुरी में स्थापित की गई है। इसके निम्न त उद्देश है—

(क) आर्य महिलाओं की उन्नति के लिये नियमित कार्य व्यवस्था पन (ख) श्रुति-स्मृति प्रतिपादित पवित्र नारीधर्म का (ग) स्वधर्मानुकूल स्त्री-शिक्षा का प्रचार (घ) पारस्परिक थापित कर हिन्दु सतियों में एकता की वृद्धि (ङ) सामा- कुरीतियों का संशोधन और (च) हिन्दी की उन्नति करना।

परिषद् के विशेष नियम—१-सब प्रकार की सभ्याओं को सकी मुख पत्रिका "आर्य महिला" मुफ़्त मिलेगी। २-स्त्रियाँ ी सभ्याएँ हो सकेंगी। ३-यदि पुरुष भी परिषद् की किसी रह की सहायता करें तो वे पृष्ठपोषक समझे जायंगे और नको भी पत्रिका मुफ़्त मिला करेगी। ४-परिषद् की चार कार की सभ्याओं के ये नियम हैं:—

५०) एक बार देने पर "आजीवनसभ्या" हा बार या प्रति मास १०) देने पर "संरक्षक वार्षिक देने पर "सहायक सभ्या" और पर या असमर्थ होने से ३) ही वार्षिक देने भ्या" आर्य महिला मात्र बन सकती हैं।

कार्याध्यक्षा,
आर्य महिलाहितकारिणी
महापरिषत्कार्यालय,
श्री महामण्डलभवन, जगत् गञ्ज, बनारस।

बारहमासी
मङ्गलदेव पराज
मेगास्थनीजका
वर्णन
राग रत्नाकर
रसिक विलास
रामगीता। (छो
वसन्त श्रृङ्गार

श्री भारत धर्म महामण्डल के सभ्यगण और मुखपत्र।

श्री भारत धर्म महामण्डल प्रधान कार्यालय काशी से एक हिन्दी भाषा और दूसरा अंग्रेजी भाषा का इस प्रकार दो एवं प्रान्तीय कार्यालयों से अन्यान्य भाषाओं के कई मासिक पत्र प्रकाशित होते हैं।

श्री महामण्डल के पाँच श्रेणी के सभ्य होते हैं। यथाः— स्वाधीन नरपति और प्रधान प्रधान धर्माचार्यगण संरक्षक होते हैं। भारतवर्ष के सब प्रान्तों के बड़े बड़े जमींदार सेठ साहूकार आदि सामाजिक नेता उस उस प्रान्त के चुनाव के द्वारा प्रतिनिधि सभ्य चुने जाते हैं। प्रत्येक प्रान्तों के अध्यापक ब्राह्मणों में से उस उस प्रान्तीय मण्डल द्वारा चुने जाकर धर्मव्यवस्थापक सभ्य बनाये जाते हैं। भारतवर्ष के सब प्रान्तों से पाँच प्रकार के सहायक सभ्य लिये जाते हैं, विद्या-सम्बंधीय सहायक सभ्य, धर्मकार्य करने वाले सहायक सभ्य, महामण्डल, प्रान्तीय मण्डल और शाखा सभाओं को धन दान करने वाले सहायक सभ्य, विद्वान् ब्राह्मण सहायक सभ्य और साधु संन्यासी सहायक सभ्य। पाँचवी श्रेणी के सभ्य साधारण सभ्य कहाते हैं जो २॥) वार्षिक देने से हिन्दू स्त्री पुरुष हो सकते हैं। इन सब प्रकार के सभ्यों और श्री महामण्डल का प्रान्तीय मण्डल, शाखा सभा और संयुक्त सभाओं को श्री महामण्डल का हिन्दी अथवा अंग्रेजी मासिक पत्र बिना मूल्य दिया जाता है। इसके अतिरिक्त समाजहितकारी कोष के द्वारा उनके उत्तराधिकारियों को विशेष लाभ मिलता है। पत्र व्यवहार इस पते पर करें—

प्रधानाध्यक्ष,

श्री भारत धर्म महामण्डल, जगत् गञ्ज, काशी।